"सरस्वती श्रुतिमहती न हीयताम्।"

सरस्वती।

एक हिन्दु-गार्हस्थ्य रूपक।

भारतवर्ष की प्रधान राजधानी कलकत्ता महानगरी में सर्व प्रथम हिन्दी पत्रों के
प्रवर्त्तक-अधिष्ठाता अर्थात् 'भारतमित्र' 'सारसुधानिधि' 'उचितवक्ता'
'विद्याविलास' 'सारस्वतप्रकाश' आदि के जन्मदाता-सम्पादक
एवं जम्बु-काश्मीर विद्या-विभाग के पूर्व प्रधानाध्यक्ष
तथा अनेक हिन्दी पुस्तकों के प्रणेता।

प० दुर्गाप्रसाद मिश्र एफ० बी० एस० एस०

लिखित।

'उचितवक्ता'-यंत्राध्यक्ष प० कालीप्रसाद मिश्र द्वारा
संशोधित और परिवर्द्धित।

कलकत्ता
बड़ा बाजार सूतापट्टी नं० ६५ ... में।
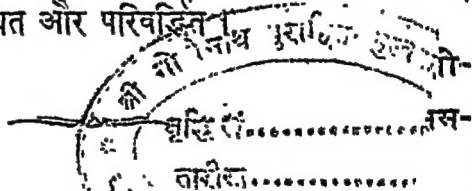
'उचितवक्ता'-यंत्रालय के डी० ... मिश्र द्वारा ... सं० १९५५

संवत् १...

पं० दुर्गाप्रसाद मिश्र प्रणीत नीचे लिखी पुस्तकें "उचितवक्ता" प्रेस में मिलेंगी ।

(नाम)		(दाम)
* चारुपाठ पहला भाग	(नागरी)	)
* चारुपाठ दूसरा भाग	,,	।=)
* चारुपाठ तीसरा भाग	,,	॥)
* काश्मीर कीर्त्ति	,,	-)
* लक्ष्मीबाईका जीवन चरित	,,	-)
* विद्यामुकुल	,,	-)
प्रभास-मिलन । (गीति-रूपक)		॥)
* विद्यामुकुल	(कैथी)	=)
लक्ष्मी (गार्हस्थरूपक)	(यंत्रस्थ)	१)
विल्व मंगल (नाटक ,	,,	१)
शिक्षादर्शन	,,	१)
* हिन्दीबोध, १ भाग (हिन्दी १ली पोथी)	,,	-)
* ,, २ ,,	,,	-)॥
,, ३ ,,	,,	=)
आदर्श चरित	,,	=)
संक्षिप्त महाभारत (आदिपर्व)	,,	।=)
नीतिकुसुम	,,	≡)
[illegible]जीका जीवन चरित	,,	॥)
[illegible] चिकित्सा	,,	॥)

[illegible]ी लेने [illegible] यथायोग्य कमीशन दिया जाताहै।

[illegible] विद्या[illegible] स्वीकृत हैं।

निवेदन ।

माननीय पवित्र-चरित्र-मित्र हिन्दी-हितैपी भार-तेन्दु-कनिष्ठ श्रीयुत वावू राधाकृष्ण दास मंत्री "काशी नागरी प्रचारिणी सभा" महाशय ने "स्वर्णलता" के वांछनीय बीजों को हिन्दी-साहित्य के सुविशाल क्षेत्र में वपन पूर्वक सुवर्द्धित एवं शाखा प्रशाखाओं से समृद्ध तथा पुष्प पल्लवों से परिपूरित वा सुसज्जित कर भारत के विख्यात वेर-वृक्ष और फूटकी लुटती लता के प्रभाव को घटाने का प्रशंसनीय प्रयत्न किया । मेरे पूजनीय जेष्ट सहोदर प० दुर्गा प्रसाद जी ने उसी "स्वर्णलता" की "सरला" शाखा के सर्वांग सुन्दर पुष्पों को चयनकर यह "सरस्वती-कंठ-माला" ग्रथित की है ॥

इसको सुरंजित करने और अंतिम सुमेरु वांधने के निमित्त निज वचन-विन्यास-वाटिका के विविध-वर्ण-विभूपित पुष्पों को भी संचय पूर्वक नियोजित कर, उन्हों ने इस "सरस्वती-कंठ-माला" को सर्वावयव सम्पन्न एवं परिवर्द्धित किया है ।

यदि पाठक पाठिकागण इस के आघ्राण से मनो-मालिन्य विदूरित करने और सौरभान्वित होने में सम-र्थ होंगे तो यावतीय श्रम सफल समझा जायगा ॥

निवेदक—

श्री कालीप्रसाद शर्मा ।

'उचितवक्ता'-यंत्रालय, कलकत्ता; विजया दशमी सं० १९५५

प्रत्यर्पण ।

हे भारत के प्रत्येक हिन्दू गृहस्थ की गृह-लक्ष्मी एवं गृह-सरस्वती !

इस नाटक में आपही लोगों के अनादर्श और आदर्श चरित्र का विचित्र चित्र चित्रित है, मैं केवल एक उपलक्ष मात्र हूं, अतएव आपकी निरादरणीय और आदरणीय वस्तु आप ही लोगों के कोमल कर-कमलों में सादर प्रत्यर्पण करता हूं, समर्पण नहीं; क्योंकि समर्पण वह पदार्थ किया जाता है जो निज का हो। ये सब विचित्र तथा सुचित्र चरित्र तो आप ही लोगों की अलौकिक सम्पत्ति है।

सुतरां आपही लोग इस की प्रकृत अधिकारिणी हैं, इस से आप की वस्तु आप को प्रत्यर्पित है। लीजिये और इसकी मर्य्यादा संरक्षित कीजिये। मुझे पूर्ण आशा है कि, इस के पाठ से लक्ष्मी (धन) का गर्व घटेगा, और सरस्वती (विद्या) का प्रभाव-वैभव बढ़कर गृहस्थी मात्र को सुख-सौरभ से सौरभान्वित और आमोदित करेगा।

प्रत्यर्पक—

श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा।

सांबा नगर (जम्बु-काश्मीर राज्य) विजया दशमी सं० १९७४

नाटकीय-व्यक्ति ।

पुरुष ।

दुर्गा प्रसाद ... ... महाराजके सहकारी कोषाध्यक्ष (नायब खजांची)

काली प्रसाद ... ... दुर्गा प्रसाद के कनिष्ठ सहोदर

लबड़धूंराम ... ... दुर्गा प्रसाद का साला

सोहन ... ... दुर्गा प्रसाद का पुत्र

मोहन ... ... काली प्रसाद का पुत्र

गुरुदेव, कोतवाल, दारोगा-फ़िदामहम्मद, कानस्टेबिल हरिसिंह, बूंदी धोबी, मंत्री (दिवानजी), गायक, भाट, मोदी, कालेज के दो छात्र, बटुकनाथ, घूमी चौबे, चने वाला, लंगते, साहुकार, कंगले, बालकगण इत्यादि ॥

स्त्री ।

लक्ष्मी ... ... दुर्गा प्रसाद की स्त्री

सरस्वती ... ... काली प्रसाद की स्त्री

पंडाइन ... ... एक स्वार्थी पड़ोसिन बुढ़िया (ठकुर सुहाती कहने वाली)

दया ... ... दुर्गा-काली प्रसाद के घर की प्रवीण दाई ।

सोहिनी ... ... दुर्गा प्रसाद की कन्या

गोमती ... ... दुर्गा प्रसाद की सास

ग्राम्य और पड़ोसिन स्त्रियें, मुदियाइन, वेश्या इत्यादि ॥

श्रीहरिः

प्रस्तावना ।

नान्दी ।

"कौन है सीस पै? चन्द्रकला, कहा याको है नाम यही त्रिपुरारी? । हां, यही नाम है भूलि गई किमि जानत हू तुम प्रान पियारी ॥ नारिहिं पूछति चन्द्रहि नाहिं कहै विजया जदि चन्द्र लवारी ॥ यों गिरिजै छलि गङ्ग छिपावत ईस हरैं सब पीर तुम्हारी ॥"

(सूत्रधार का प्रवेश)

सूत्रधार—दर्शक मंडली हमारी बाट देख रही हैं, पर हमारे जी में आज कोई स्थिरता होती ही नहीं कि इन्हें कौन सा खेल दिखाकर संतुष्ट करें? क्योंकि आज कल के साहित्य सेवियों ने तो अङ्गरेजी रीति नीति के नाटक उपन्यास पढ़कर अपनी लेखनी को भी अङ्गरेजी ही चाल ढाल की कर डाला है और इस प्राचीन भारत वर्ष की प्राचीन प्रचलित चाल को दूर करके नयी प्रेम-कहानी को चलाया है; हम इसे दिखाकर व्यर्थ के आमोद के लिये और भी कुरुचि फैलाना उचित नहीं समझते । तो क्या इन्हें योंही निराश लौटा दें? (कुछ सोचकर नेपथ्य की ओर देख) मारिष ! मारिष ! इधर तो आना ॥

(पारिपार्श्वक का प्रवेश)

पारि—कहिये, क्या याद किया है? आज ऐसे उद्विग्न क्यों देख पड़ते हैं?

सूत्र—मित्र! क्या कहें? आज हमारी बुद्धि बड़ी चंचल हो रही है, कुछ स्थिर नहीं कर सकती कि अपने गुण ग्राहकों को क्या दिखाकर रिझावें? क्योंकि आज कल के साहित्याचार्यों ने इस देश के साहित्य को अङ्गरेजी रीति-मय कर डाला है और जो प्राचीन ग्रन्थ हैं, उन्हें ये लोग कई वेर देख चुके हैं, तुम्हें स्मरण होगा कि हम लोगों के परमाराध्य हिन्दी साहित्य के जन्मदाता माननीय प्यारे हरिश्चन्द्र ने आज्ञा दी थी कि केवल हमारे ही नाटकों को खेल कर दूसरे उत्साहियों के उत्साह को भङ्ग न करना; वरन वीच वीच में उन लोगों को प्रोत्साहित करने के लिये उन लोगों के वनाये नाटकों का भी अभिनय अवश्य करना। अव तुम्हीं कहो आज कौन सा खेल खेला जाय?

पारि—क्यों, तुम्हीं ने न आज "सरस्वती" की प्रशंसा की थी? हम ने तो आज उसी के खेलने का प्रवन्ध किया, पर तुम्हें इस समय न जाने क्या हो गया है, कि दूसरे ही ध्यान में मग्न हो रहे हो! क्या उस में भी वही दोष हैं जिनका तुम वर्णन कर रहे थे?

सूत्र—आह! मैं तो भूल ही गया था, ठीक है, उसी का अभिनय होना चाहिये, क्योंकि यह हम दीन भारत-वासियों की हीन गार्हस्थ कथा अवश्य ही कुछ न कुछ लोगों को अपने नित्य के कुव्यवहारों को सुधारने की ओर झुकावेगी और दूसरे यह शाखा प्रशाखा भी उसी वृक्ष से पल्लवित हुई है जिसने बिचारी मुरझायी नागरी लता को आश्रम देकर लहलही किया था॥

(नेपथ्य में गीत)

"जग में घर की फूट बुरी।
घर के फूटहि सों बिनसाई सुवरन लङ्कपुरी।
फूटहि सों सब कौरव नासे भारत जुद्ध भयो॥
जाको घाटो या भारत में अबलौं नहिं पुजयो।
फूटहि सों जयचन्द बिनासे गयो मगध को राज॥
चन्द्रगुप्त को नासन चाह्यो आपु नसे सहसाज।
फूटहि सों जयचन्द बुलायो जवनन भारत धाम।
जाको फल अबलौं भोगत सब आरज होइ गुलाम॥
जो जग में धनमान और बल अपुनो राखन होय।
तो अपने घर में भूलेहु फूट करौ मत कोय॥"

सूत्रधार– आहा! चतुर नटवर ने खेल आरम्भ करने की सूचना दी, तो चलो हमलोग भी अपना काम देखें॥

(प्रस्थान)

इति प्रस्तावना।

विशेष अशुद्ध शोधन।

पृष्ठ	पंक्ति	(अशुद्ध)	(शुद्ध)
८	१०	लड़के को, बलाय	लड़के-बलाय
६८	१२	जगम्बा	जगदम्बा

अन्यान्य अशुद्धियों को पाठक गण कृपाकर स्वयं सुधार लें

टिप्पणी—प्रत्येक अंक के अंत में "पटक्षेप" शब्द लिखना उचित था, परंतु आज कल कई नाटकाध्यक्ष दो तीन अंक तक का अभिनय श्रोताओं के अनुरोध से लगातार भी करवा डालते हैं, इस से पटक्षेप का भार उन्हीं की अभिरुचि और सुबीते पर निर्भर है।

श्री सरस्वती देव्यै नमः ।

सरस्वती ।

—:o:—

प्रथम अङ्क ।

प्रथम गर्भांक ।

स्थान—घर का आंगन ।

(लक्ष्मी, पंडाइन, सरस्वती, सोहन, सोहिनी मोहन,)

लक्ष्मी—मारे दुख के अंग अंग जल गया, पंडाइन ! तन मन खाक हो गया । सातापांचा ने मिल कर हड्डी जला खायी ।

पंडाइन—देख लक्ष्मी, मेरे लिये जैसी तू, वैसीही वह, धरम की कहूंगी; मैं फरफन्द नहीं जानती ।

लक्ष्मी—तुमही कहो न कि, लहू मास का शरीर, कितना सह सकता है ? और अकेली कितना कुछ करूं ? भगवान मानो मुझे दुख देकरही राजी है । मुझ से क्या इतना सहा जाता है ?

पंडाइन—क्यों लक्ष्मी तुझे किस वात की कमी है, किस वात का दुख है ?

लक्ष्मी—क्या कहूं पंडाइन, उस दिन चूल्हा नहीं सुलगा फूकते फूकते सिर दुख गया, इसी से अंदर जा

कर जरा सो रही, देखा कि छोटी बहू आयीं, मैं ने कहा छोटी ठकुराइन ! मेरे सिर में पीड़ा है, छिन भर दबा दे, बहन अधरम की बात नहीं बोलनी चाहिये, पहले तो थोड़ी देर तक दबाती रही, उसके बाद ज्योंही मेरी आंखें लगने लगीं, कि छोटी ठकुराइन मेरे ऊपर पसर गयी। आधीरात को हमारे उनो ने पुकारा आंखें खोल कर देखा कि हे भगवान ! मेरे ऊपर पड़ी घुर्राटे ले रही है।

पंडाइन—ढिठाई तो कम नहीं है, तुम उसी छिन पंखे की डंडी से समझा नहीं सकीं। एक तो यह दुबला-देह, इस पर वह हाथी सा सिर रख कर, सिर का जूड़ा तो नहीं मानो एक लोढ़ा ! कहीं देर तक पड़ी रहती तो जान जोखिम का डर था। दरद बढ़ तो नहीं गयी। थोड़ा सा तेल मलो बहनी।

लक्ष्मी—क्या कहूं, मुझे देख देख कर उन लोगों को नींद नहीं आती, मैं मर जाऊं तो वे लोग परसाद बांटें मन्नत चढ़ावें पंडाइन ! विधाता ने मेरी देह को पीड़ा का पिंजरा बना दिया है। काम धंधे से छुट्टी पाकर ज्योंही जरा बैठती हूं कि, देह दुखने लगती

है, उवासी आने लगती है, आलस घेर लेता है, लाचार वैठी नहीं रह सकती, लड़के लड़की को साथ लेकर भीतर थोड़ा जा सोती हूं ।

पंडाइन—आहा ! वड़ी जिठानी माके वरावर, देह मल दे, सिर दवा दे, यह नहीं; यें वहना यह क्या सुनती हूं सत्यभामा ने रुक्मिनी की कितनी सेवा की थी, और फिर वह आपस में सौतिन थीं ।

लक्ष्मी—इस पर लोगों की ऐसी वुरी दीठ है कि, कहीं मांदगी से आग लगी सो गयी, वह भी उन लोगों से सहा नहीं जाता; मैं क्या जान वूझ के सोती हूं कि उन की आंखों में कांटे चुभते हैं । मेरी पीड़ा से सोना देखकर भी लोगों की छाती फटती है ।

पंडाइन—दैयारे ! दैया ! यह क्या वात, किसी की जान जाती है नहो तनिक सो रही; इससे भौं क्यों चढ़ाना, नाक क्यों सिकोड़ना ? उन लोगों को पीड़ा क्यों नहीं होती ? वे भी क्यों ऐसेही नहीं सो रहते ? अजी इसा से कहते हैं कि पराये कभी अपने हुए हैं ? अपना कोई क्या ऐसी वात कह सकता है ? घर के लोग लुगाई ही कहते हैं अरे इसी से कहते हैं कि

घर के बैरी से बाहर के बैरीही अच्छे। अरे बाबा घर के लोग ऐसा करें तो प्रान बच सकते हैं ? क्या करेगी बहिना, बड़े पेड़ को बड़ा तुफान, बड़ी हवा झेलनी पड़ती है, भगवान ने तुमको सहनेही को बनाया है सहो।

लक्ष्मी—क्या कहा पंडाइन ? दो एक दिन सब सहा जाता है, नित उठ कर क्या सहा जाता है ? वे काम करती हैं मानो मोल ले लिया है। महादेव की पूजा करती हैं मानो हम पर अहसान करती हैं पूजा में तो किसी बात की कमी नहीं देख पड़ती, कमी देख पड़ती है, मेरी सेवा करने में।

पंडाइन—देख महादेव की पूजा को जैसे बने बंद कराओ, यह सरबनास का मूल है जहां पूजा है वहां कुशल नहीं।

लक्ष्मी—मैं किस गिनती में हूं पंडाइन, कि मेरी बात चलेगी ? मेरी कौन सुनता और मानता है ?

(सरस्वती का प्रवेश)

सरस्वती—बेबेजी आज रात को क्या खाओगी ? आटा गूंधूं या दाल चावल चढ़ाऊं ?

लक्ष्मी—मुझे इतना बखेड़ा नहीं भाता, अपनी देह

के मारे मरी जाती हूं रात को मैं क्या खाया करती हूं भात क्या मुझे रुचता है ?

सरस्वती—नहीं बेबेजी गुस्सा नहीं करो, कल रात को रोटी बनायी थी इससे आपने कितनी बकझक की थी।

लक्ष्मी—कल कैसी गरमी पड़ी थी पंडाइन।

पंडाइन—मुझे तू भी जैसी वह भी वैसी दोनों एक सी।

सरस्वती—इनों ने रोटी नहीं खायी तो मैं ने तुरन्त चावल चढ़ा दिये।

लक्ष्मी—रोटी बनी हुई बेकाम फेकी गयी, इससे तो किसी को कुछ जान नहीं पड़ता, जिसे सिर का पसीना पैर तक बहा कर लाना पड़ता है उसी का जी जानता है।

सरस्वती—नहीं बेबेजी रोटियां तो फेकी नहीं गयीं।

लक्ष्मी—तो वह रोटी क्या हुई ?

सरस्वती—उन्होने आकर कहा कि सिर में पीड़ा है आज भात नहीं खाऊंगा, तो मैं ने कहा कि कल की बासी रोटी है खाओगे, तो बोले दे खालें।

लक्ष्मी—हां वह रोटियां घर वाले को निगला दी हैं ?

सरस्वती—आप बासी रोटियां खायंगी, यह तो मैं नहीं जानती थी।

लक्ष्मी—देखा देखा पंडाइन इसकी अक्कल देखी, कल से दरद से मर रही हूं सवेरे दूध के साथ थोड़ा सा भात खाया था, रात को वह एक सेर रबड़ी लाये थे वह भी सब नहीं खायी गयी, यह सोचा था कि पेट खाली है सवेरे गरम दूध के साथ बासी रोटियां खाकर कुछ आधार हो जायगा, वह भी इसने अपने उसको गटका दी हैं, समझी पंडाइन मेरे नाम से चूल्हे की राख भी रक्खी रहे तौभी लोगों के मारे बचने नहीं पाती। अरे आंखों से जल क्यों निकलने लगा रोती है क्या ? इस में रोने की बात कौनसी हुई ? बातें नहीं सुनी जातीं जानों फूटी गगरी, जल पड़ा कि चू निकली, टपकने लगी।

सरस्वती—बेबेजी ! बेबेजी ! तुम्हारे पैरों पड़ती हूं तुम मुझे इस तरह मत धमकाओ, मुझे ऐसे झिड़कने से मेरा जी कैसा दुखी होता है, वह मैं क्या कहूं मेरी मा नहीं है, सास नहीं है तुम मेरी उन लोगों के ठिकाने हो, मा ने भी कितनी बार धमकाया है, सास की भी धमकियां खायी हैं, तुम मुझे उसी तरह बको झको, वैसेही धमकाओ, मुझे दुख न होगा, बेबेजी

तुमारे दोनों पांव पड़ती हूं, तुम मुंह फुलाकर, भौं चढ़ाकर, आंखें तरेर कर मुझे मत धमकाओ, तुम्हारा ऐसा मुंह देखने से मेरा जी डर उठता है।

लक्ष्मी—सुनो पंडाइन सुनो, चीनी की चासनी भी चढ़ाती है कांटे भी चुभाती है, मा बनायी जाती हूं, सास बनायी जाती हूं, और भी कितना कुछ बनूंगी, फिर मेरा मुंह देखने से डर भी लगता है क्यों क्या मैं शेर हूं, भालू हूं कि सबको डराती फिरती हूं।

पंडाइन—देख छोटी बहू मुझे तू जैसी वह भी वैसी। सच्ची बात कहती हूं बड़ाई छुटाई माननी चाहिये। हजार हो बड़ी जिठानी माके बराबर, उसकी कुछ बड़ाई करके चल, जो कुछ हो उसी का तो सब कुछ है, उसीके घर वाले की सब कमाई है वही तो मालिक है, उसको मानना और बड़ाई रखनाही तेरा धरम है। उसे न मानना अच्छा नहीं।

लक्ष्मी—देख पंडाइन मैंने उसे क्या कहा और उसने कहने में कसर क्या रक्खी ?

सरस्वती—कहां बेबेजी! मैंने तुमको क्या कहा मैं ने तो कुछ नहीं कहा।

लक्ष्मी—नहीं तुम लोग कुछ बोलना नहीं जानते, मुझ से ही भूल भयी, छिमा करो, कुछ काम हो तो जांके करो। (पंडाइन की ओर देख कर) जीते जी जला खाया, सब कुछ पराये घर भर रही हूं तो भी किसी को दया माया नहीं आती है।

सरस्वती—हे भगवान! हे नारायण!!

लक्ष्मी—तुम भगवान न दिखाओ, मेरी लड़के वालों की गृहस्थी है, तुम देवी भगवान को न बुलाओ, खाती पीती उड़ाती हो; यही बहुत है भगवान को क्यों बुलाती हो (सरस्वती का प्रस्थान) देखा देखा पंडाइन छोटे मुंह से बड़ी बात सुनी इतने पर भी भगवान दिखाती है (रोना)।

पंडाइन—अरे मर छोकरी सांझ को राक्षसी ने किया क्या, भगवान को दिखाकर नारायण को बुलाकर, इस बिचारी की आंखों से आंसू टपकवा दिये, भरी सांझ को दुर्भागी छोकरी ने क्या किया; झूठी खिटखिट मचादी। मत रो बहना मत रो। भगवान ही हैं भगवान विचार करेंगे, रो मत बहन चुप करो धीरज धरो।

(सोहन सोहिनी और मोहन का प्रवेश)

सोहन—मा, मां—

मोहन—बड़ी मा बड़ी—

सोहन—मुझे एक बंसरी ले देना ।

सोहिनी—वह देख मा वहां कितनी बंसरी आयी हैं कितने खिलौने आये हैं, देना मा मुझे ले दे ।

लक्ष्मी—चलो तो पंडाइन, देखें कैसी बंसरी बिकने आयी हैं । मोहन क्यों कहां आता है ?

मोहन—मैं भी एक बंसरी लूंगा बड़ी मा ।

लक्ष्मी—यह तो बड़ी विपदा ठहरी अपने लड़के को बंसी मोल ले दूंगी, वह भी इस लड़के को, बलाय के मारे न होगा, कहां से मरने को आया देखो ना ।

सोहन—मैं जो बंसी लूंगा वही तुमे भी बजाने को दूंगा अभी ।

मोहन—नहीं मैं एक जुदा लूंगा ।

पंडाइन—अरे ए ! मोहन तेरी मा ने अभी थोड़ी बेर भयी दया के हाथ से रुपया तुड़वा मंगाया है, जा ना अपनी मा के पास जा ।

(मोहन का प्रस्थान)

सोहिनी—छोटे भैया और हम बांसरी बजावेंगे, बांसरी बजावेंगे ।

(सब का प्रस्थान)

———:0:———

प्रथम अङ्क ।

द्वितीय गर्भाङ्क।

दुर्गा काली के घर का सामना ।

(बिसाती, थोड़ी सी पड़ोसिन स्त्रियां; लक्ष्मी, सोहन, सोहिनी, पंडाइन, सरस्वती, मोहन)

१ स्त्री—(संदूकड़ी हाथ में लेकर) चल मुए, इस छोटी सी संदूकड़ी का दाम दस पैसा । ठीक क्या बतलाना ।

बिसाती—ठीक तो कहा है माजी ।

२ स्त्री—इस कंघी का क्या लेगा ?

बिसाती—चार पैसा ।

२ स्त्री—नहीं नहीं साढ़े तीन पैसे ले ।

बिसाती—नहीं माजी चार पैसे लेंगे, लेना हो तो लो नहीं तो रख दो ।

२ स्त्री—ऐसा तो बेचने वाला नहीं देखा, अच्छा ले बाबा एकही आना ले ।

१ स्त्री—हैं री तू ! ऐसी नादान क्यों है, मोल तोल नहीं जानती ।

बिसाती—नहीं बीबी तुमही जानती हो ।

१ स्त्री—क्यों भाई इस डिबिया का क्या दाम ?

बिसाती—इसका दाम दो पैसा ।

१ स्त्री—यह क्या ठग है ?

बिसाती—हां तुम लोग ऐसीही भोली हो कि ठग जाओगी । मैंने ऐसा पुन्न किया है कि तुमको भुला लूंगा, धोखा दूंगा ।

१ स्त्री—रंग उड़ तो नहीं जायगा ? छेद छाद तो नहीं है कच्चा रंग तो नहीं है, टूट तो नहीं जायगी ।

बिसाती—क्यों जी तुम तो लिखना पढ़ना जानती हो ऐसी जगह में क्यों रहती हो, कलकत्ते चली जाओ तो मुसद्दी बन जाओ ।

१ स्त्री—मुआ ठठोली करता है, बेचने आया है बेच जा, इतनी बातें क्यों बनाता है ?

२ स्त्री—जाऊं सांझ भयी दिया उआ बालना है ।

(लक्ष्मी, पंडाइन, सोहन, सोहिनी का प्रवेश)

लक्ष्मी—दे तो भाई दो बांसरी ।

१ स्त्री—बहू जी तुम मोल मत करो, मैं चुकाऊंगी।

बिसाती—पैसे पैसे बांसरी बिक रही है, इस में दर भाव काहे का ?

१ स्त्री—दो पैसे में तीन नहीं देगा ?

बिसाती—तुम इतनी सरदारी क्यों छौंकती हो जो लेंगी वह भाव करें।

लक्ष्मी—ले पंडाइन दो पैसे इसके सिर मार।

१ स्त्री—क्यों भाई यह कंघी हाथी दांत की है ना ?

बिसाती—हां हां यह वड़े हाथी दांत की है तुम तो पहचानती हो।

१ स्त्री—हां हां हो सकती है।

१ ग्राम्यस्त्री—अरे यह डविया मुझे दे ना साढ़े तीन पैसा दूंगी।

बिसाती—नहीं नहीं वह पांच पैसे से कम में न होगी।

ग्राम्यस्त्री—बेचके पछता बेच के दांव घात लगा।

बिसाती—अरे मैया एक डिबिया बेचके सब दुख दूर हो जायगा। क्यों तू जनाना क्यों हुई, मर्द न हो सकी।

(सरस्वती और मोहन का प्रवेश)

मोहन—मा मा यहां क्या है मा ? चलो हम भी वहां चलें, देखें क्या है ?

सरस्वती—वहां सव लड़ते झगड़ते हैं, वहां जाने से हम लोगों को मारेंगे ।

मोहन—कैसे झगड़ते हैं कौन मारेगा? देखेंगे मा ।

सरस्वती—नहीं वेटा वह सव नहीं देखना, चलो हम लोग भागें ।

मोहन—नहीं मा मैं नहीं भागूंगा, वहां जाऊंगा ।

लक्ष्मी—जा सोहन यहां क्या करता है, जा मोहन को अपनी बांसरी दिखला आ कि, कैसी है? सोहिनी तू भी जा ।

सोहन—मोहन देखो देखो ! मैंने कैसी बांसरी ली है ।

सोहनी—मेरी भी कैसी है ।

मोहन—ए मा ! एक मैं भी लूंगा ।

सरस्वती—आज नहीं वेटा ! कल जव लावेगा, तव ले दूंगी ।

मोहन—नहीं आज, आजही लूंगा ।

(सरस्वती का आंचल पकड़ कर मोहन टानता है और विसाती की टोकरी से एक बांसरी उठा लेता है).

मोहन—मुझे भी बांसरी मिल गयी, आओ सोहन भैया ! खेलने चलें ।

सरस्वती—मोहन बच्चा मत जाओ; बेटा मेरे, लाल मेरे, आज मेरे पास पैसा नहीं है, कल ले दूंगी।

बिसाती—मा जी लड़के ने उठा लिया है, एक पैसे की क्या बात है ?

सरस्वती—अब क्या होगा ? मोहन ने तो बांसरी लौटायी नहीं; बेबेजी एक पैसा दोगी ?

लक्ष्मी—देख पंडाइन आज कैसी ठंढो हवा है ?

सरस्वती—बेबेजी एक पैसा उधार दोगी ?

लक्ष्मी—देख पंडाइन आज रात को अच्छी नींद आवेगी।

१ स्त्री—बड़ी जनी सुनती नहीं हो, तुमारी दिरानी क्या कहती है, उसकी बात का जवाब दो।

लक्ष्मी—ऐं—क्या—क्या कहा ?

सरस्वती—एक पैसा उधार दोगी ?

लक्ष्मी—मैं तो महाजनी नहीं करती कि, उधार दूंगी ?

सरस्वती—अच्छा उधार न दो तो अपने मोहन को एक बंसरी ले दो।

लक्ष्मी—मैं तो कलपवृच्छ बन के नहीं बैठी हूं कि, जब कोई कुछ मांगेगा, तब उसे वही दूंगी।

सरस्वती—यह तो तुमारा दान करना नहीं है, मोहन भी तो तुमाराही है, पराया नहीं है, जैसे सोहन सोहिनी वैसाही मोहन ।

लक्ष्मी—लोग जैसा समझ लेते हैं, जो वैसाही होता तो दुख काहे का रहता, मैं भी अपने मन में समझ करही राजरानी वन वैठती । ऐसा होने से क्या मेरी ऐसी दुरगत होती, जैसे धरती के मनुक्ख हैं, इन को जितना दो, उतनीही लालच वढ़ती है । हर महीने अंजली भर रुपये आते हैं, सम्हाल कर चलें तो घाटा किस वात का, पर ऐसा हो कैसे सकता है? एक जना सिर पर वोझ उठाकर लावेगा, दस जने वे खटके उड़ावेंगे। वह तो सीधे हैं। जो सुध बुध होती तो क्या आज तक पिलपिल कर सिर का पसीना पैर तक आता? रुपयों के चौबच्चे भर जाते। क्यों पंडाइन ऐसे वेअक्कल के पाले पड़ी, जलते मरते जनम वीता ।

(आंचल से मुंह ढांक कर रोना)

पंडाइन—सरस्वती की भी बड़ी वढ़ी चढ़ी कड़ी चाल है। छोटे मुंह बड़ी वात है । जब तब उसे योंही जलाया करती है, लक्ष्मी का मालिकही रुजगार करता

है, सब कुछ इसी का है, यही पूरी मालकिनी है, पर तौ भी मरने पर भी मुंह से आधी बात नहीं निकालती।

सरस्वती—अरे अब क्या होगा, बिसाती भी तो अब चल पड़ा।

पंडाइन—तू अपना पैसा क्या नहीं लेगा ?

बिसाती—मैं उस बांसरी का दाम नहीं चाहता; बहुत बेचा करता हूं, खैर एक योंही सही।

सरस्वती—हें भगवान यह भी लिखा था।

बिसाती—नहीं माजी मैं तो हमेशा आता जाता हूं अब के जिस दिन इस महल्ले में आऊंगा, उस दिन दाम ले जाऊंगा, दाम का क्या फिकर है ?

१ स्त्री—डिबिया का साढ़े तीन पैसा न लेगा ?

बिसाती—नहीं नहीं वह डिबिया बिकाऊ नहीं है।

(बिसाती का प्रस्थान)

पंडाइन—यह क्या दुकानदार है न, फिर यह क्या बात ? इस में फेरफार है, मतलब है।

ग्राम्यस्त्री—एं बहिनी इस में फेरफार है, मतलब है, तुम सीधी साधी हो, इसी से अपने सा सब को समझती हो, इसमें कुछ मतलब है, बिना मतलब के कुछ होता

है ? वह बिसाती एक आध पैसाही तो नफा करता है। उसीने एक पूरी बंसरी योंही देदी; इस में जरूर मतलब है, फेरफार है वहन! जाऊं गृहस्ती का वहुत काम धंधा पड़ा है। (स्वगत) वंसरी वेदाम दे गया। (प्रस्थान)

पंडाइन—चलो वहन घर जायं (प्रस्थानोद्यत)

लक्ष्मी—तुमने दाल मांगी थी ना, वातों वात भूल गयी थी।

पंडाइन—ओह भूल गयी थी, बूढी भयी, आग लगे इस याद को; कुछ याद नहीं रहता। और तुम्हाराही तो दिया खाती हूं, तुमही लोगों से तो लेती हूं, चलो थोड़ीसी दाल लेतीजाऊं। दो, थोड़ी सी मूंग की दाल लेजाऊं।

(दोनों का प्रस्थान)

—:०:—

प्रथम अङ्क।

तृतीय गर्भांक।

सरस्वती की कोठड़ी का सामना।

(सरस्वती और मोहन खड़े हैं)

मोहन—मा ! तू क्यों रोती है ?

सरस्वती—कहां बेटा ? मैं तो नहीं रोती, मेरी गोदी आ।

मोहन—यह देख तेरी आंख से जल निकल रहा है, तू मत रो मा।

सरस्वती—नहीं बच्चा मैं रोती तो नहीं हूं, मेरे पेट में दरद होती है।

मोहन—मेरे पेट में पीड़ा होने से दया माई चूरन देती है, वही चूरन तू भी खा मा। जाऊं दया माई को बुलादूं; उसका चूरन खानेही से मिट जायगी।

सरस्वती—नहीं बेटा दया को नहीं बुलाना होगा, मेरे पेट में दरद नहीं है, मेरी आंखों में कुछ पड़ गया है, इसी से जल गिर रहा है।

मोहन—तो आ मा तेरी आंखों में फूक मार दूं तो निकल जायगा (फूकना)

सरस्वती—मुझ दुखिया कंगालिन के जीवन धन! तू अपने मुंह से मा बोल, सुनने से मेरे सब दुख दूर भागते हैं।

मोहन—रो नहीं, मा रो नहीं; तुमरी आंखों में आंसू देखने से मुझे रुलायी आती है।

सरस्वती—नहीं बच्चा मेरी आंख अच्छी हो गयी है, तू जाके सो।

मोहन—कहो कि तू अब न रोवेगी ।

सरस्वती—नहीं ।

(मोहन का प्रस्थान)

सरस्वती—हे भगवान तुम्हारे जी में यही थी । मेरा मोहन, दूध का बच्चा; उसके बांटे इतना दुख ! बच्चा मेरा और लड़कों के साथ खेलता है । उनके पास खिलौने देखकर रोता है । वह तो नहीं जानता कि, मैं अभागिन हूं । उसका भी औरों की तरह होने को जी चाहता है, वह तो नहीं जानता कि मैं पराये हाथों को देखती रहती हूं; मेरा मोहन जब किसी चीज के लिये जिद्द करता है, तब नहीं दे सकती, माके जी में कैसा दुख होता है, अनजान लड़का यह नहीं समझता, अहा ! मेरा बच्चा मा बाप के होते भी, भिखमंगा है, अहो बड़ा अचरज है ! बेवेजी के जी में कुछ भी दया मया नहीं है । भला हम लोग निकम्मे सही । हमारे घरवाले निखट्टू हैं, कुछ नहीं कमाते, रुजगार नहीं करते । पर वह भी तो नौकर की तरह खाते हैं । मैं भी तो चकरानी की तरह दिन रात सेवा टहल करती हूं । रसोईं वाली बाह्मनी सी रोटी पूरी करती हूं । घर

में नौकर दाई रक्खी जाती तो खरच पड़ता । इतना करके भी क्या बदला नहीं चुकता ? बेबेजी क्या रसोइए का लड़का समझ कर भी मेरे मोहन के हाथ एक पैसा बंसरी के लिये नहीं धर सकतीं थीं ? मेरे मोहन को बेबेजी पराया समझती हैं । पर कहां, मैं तो सोहन को पराया नहीं समझती, कोई दुरांत नहीं करती, न जाने भाग में क्या कुछ लिखा है ?

(दया का प्रवेश)

दया—क्योंजी भर सांझ की बेला ऐसे क्यों बैठी हो, क्या कुछ काम काज नहीं है, क्यों छोटी ठकुराइन तुमारा मुंह भारी भारी काहे है जी; पलक की ओट में आंसू भरे हैं, तुम क्या रोती थीं ?

सरस्वती—दया, मोहन मेरा इसी उमर में कंगाल हो गया ।

दया—राम राम ! मोहन मेरा क्यों कंगाल होने लगा, मोहन राजकुमार है । काहे काहे क्यों क्या हुआ ?

सरस्वती—दया, वह सब कैसे सुनाऊं ? (रोती है)

दया—हां, हां, सुना है, तेल लाने गयी थी, उस

पड़ोस से सुन आयी हूं । देवकी को विसाती ने साढ़े तीन पैसे में छ पैसे की डिबिया नहीं दी और मेरे मोहन को विना दाम योंही एक वंसरी दे गया । इससे उसके सिर पैर में आग लग गयी, पर मैं यह ठीक कहती हूं कि मेरे मोहन को देखकर जो कुढ़ेगा, चिढ़ेगा; उसका कभी भला न होगा, विसाती फले फूले वढ़े, धनजन से भरे पूरे ।

सरस्वती—दया दया ! इस दुख से मेरा कलेजा फटा जाता है ।

दया—इसका दुखड़ा काहे का ? विसाती लोग दुलार से कभी २ लड़कों को एक आध खिलौना योंभी दे जाते हैं । बड़ी ठकुराइन क्या एक पैसा मोहन के लिये न निकाल सकीं ? उससे तो नैहर का घर नहीं भरेगा । मा भाई का पेट नहीं पलेगा, मोहन को देने से व्रिरथा जाता, पाप होता । भया, चलो सांझ भयी, खाने पीने का धंधा देखो ।

सरस्वती—नहीं दया, आज मैं कुछ नहीं खाऊंगी ।

दया—यह क्या ? इस से मोहन का असगुन होता है । चलो चलो छोड़ो इन पींटनों को ।

सरस्वती—नहीं दया आज के लच्छन बड़े अच्छे नहीं हैं; बेबेजी उसी घड़ी से गुस्से होकर—अंदर से कुंडा चढ़ा कर पड़ी हुई हैं। न जाने आज भाईजी के आने पर क्या कुछ बखेड़ा बढ़ेगा।

दया—होनाहवाना और क्या है, बड़े ठाकुर के आने से और एक नये गहने की पक जायगी। अब चलो (प्रस्थान)

—:0:—

प्रथम अङ्क।

चतुर्थ गर्भांक।

लक्ष्मी की कोठरी का बाहरी प्रांत।

(दुर्गा प्रसाद, लक्ष्मी और दया)

दुर्गा प्रसाद—यह क्या? किवाड़ बंद है? अरे दरवाजा खोल! अरे दरवाजा खोल! खोल कहते हैं; सुनती नहीं? दरवाजा खोलना। क्यों सो रही है क्या? क्या कुछ बीमार है? सिर दुखता है। और बात क्यों नहीं करती? यह क्या एकबारही चुप! हूं हां भी तो नहीं करती, ये सब कहां गयीं? बड़ी बहू, ठकुराइन, लक्ष्मी! लक्ष्मी! अरे लक्ष्मी अरे दरवाजा खोल देना, यह क्या

आफत है, सुनती है । दरवाजा खोलेगी ? यह क्या, क्या घर में कोई नहीं है । दया दया ।

दया—(नेपथ्य से) कौन हैं ? बड़े बाबू ! ठाकुर घर में तो संझा की तयारी कर आयी हूं ।

दुर्गा प्रसाद—सन्ध्या पूजा तो पीछे होगी, अभी तो भीतर जानेही नहीं पाया । कपड़े उतारने नहीं पाता, ये कहां गयीं ?

दया—(नेपथ्य से) उसी घर के भीतर हैं । अरे गगरी भूल आयी थी ।

(गगरी लिये दया का प्रवेश और प्रस्थान)

दुर्गा प्रसाद—अरे दरवाजा खोलेगी या चला जाऊं । (दरवाजा खोल कर लक्ष्मी का भूमि पर लंबे पड़ना)

अरे यहां ऐसे क्यों लम्बी पड़ गयी ? क्या हुआ है, क्या ? आज फिर क्या हुआ ? सुना तो आज क्या हुआ ? लक्ष्मी ! लक्ष्मी ! अरे लक्ष्मी ! मैं क्या दीवार के साथ बोल रहा हूं ? बड़ी बिपद है । क्या कोई मेरी बात का जवाब नहीं देगा ? काली ! काली ! घर में हो ? काली भी घर में नहीं है ।

लक्ष्मी—अरे क्या ! क्या ! कहते हो ?

दुर्गा प्रसाद—इतनी देर में होश आयी, तू क्या यहां नहीं थी, या बहरी हुई है कि, हमारी बात सुनने में नहीं आयी।

लक्ष्मी—बहरी होऊं और अंधी होऊं; उससे किसी को क्या? मुझे कोई देख न सके तो कहो ना मैं चली जाऊं, उन लोगों के भी जी में ठंढक पड़े, झगड़ा मिटे।

दुर्गा प्रसाद—नित कहती है कि चली जाऊंगी, चली जाऊंगी, जा तो देखें कहां जायगी?

लक्ष्मी—क्यों क्या मेरे जाने की जगह नहीं है, बाप के घर या भाई के जाऊंगी तो क्या वे मुझे बिना खिलाये आप अपना पेट भर लेंगे?

दुर्गा प्रसाद—(स्वगत) "आप मियां मांगते बाहर खड़े दरवेश" "छप्पर पर फूस नहीं डेवढ़ी पर नांच" जाओ अभी जाओ, पर मैं रसद नहीं पहुंचा सकूंगा।

लक्ष्मी—जो घरही के लोग ऐसी बात कहते हैं, तो बाहर वाले क्यों न बोलेंगे? मेरे भाग में यही था भगवान!

दुर्गा प्रसाद—हाय रे भाग्य! जिसके भाग में जो लिखा है, किसकी सामर्थ्य कि उसे लंघन करे? मनोमन यह

विचारता आ रहा था कि, जिस चंद्रहार के लिये आज एक वर्ष से रगड़ा हो रहा था, आज उसकी साई दे आया हूं। घर जाकर बड़ा आदर भाव होगा। पर भाग्य में वह नहीं है। लाचार वह कैसे होगा? आदर गया चूल्हे में; एक बात भी सीधी सुनने में नहीं आती।

लक्ष्मी—(ढके मुंह) अरे मेरी मा!

दुर्गा प्रसाद—काली यह भी कहता था कि चंद्रहार अभी रहने दो; बैठक बनवा डालो। मैं ने सोचा कि बैठक तो बनही जायगी, जब कि आधो आध बन गयी है, तब आधी क्या बाकी रहेगी?

लक्ष्मी—उन दोनों की बातों से ही तो सदा जली भुनी जाती हूं। मेरी इतनी दुरगति करके भी उनको धीरज नहीं होता।

दुर्गा प्रसाद—वे लोग कौन लोग? और तुमको ही क्या कहा और क्या जलाया भुनाया?

लक्ष्मी—क्या जलाया, यह फिर पूछते हो, क्यों बाकीही क्या रक्खा है?

दुर्गा प्रसाद—साफ खुलासा न कहने से मैं क्योंकर समझूंगा? मैं तो जानी जान जोतसी नहीं हूं कि आधी

बात को सुनकर पूरी समझ जाऊंगा। तुमने तो अकेले काली का नाम नहीं लिया। उन लोग कहने से; उन लोग कौन कौन, क्योंकर समझूं ?

लक्ष्मी—कौन कौन और कौन हो सकता है ? मालिक और मालकिनी। मालिक मेरे पीछे हाथ धोके पड़े हुए हैं, मेरा कुछ होतेही मानो उनका सत्यानास होता है। जानो उनके गांठ का रुपया निकलता है। और मालकिनी इसी ढंग में लगी रहती हैं कि, जिस में सब के सामने मेरी हेठी हो, नीचा देखूं।

दुर्गा प्रसाद—क्यों, उसने तो तुमें देने को मने नहीं किया है। कहा था कि चार भले आदमी आने से बैठने उठने की तंगी होती है। इस से बैठकखाना पहले बनने से अच्छा हो।

लक्ष्मी—मैं क्या योंही कहती हूं कि तुमारी अक्कल मारी गयी है। तुम सीधे सादे हो। छल कपट नहीं जानते, समझते नहीं, काली को सहज मत समझना; बैठक बनाने की वह इतनी खींच क्यों करता है ? यह तो तुम जानते नहीं, वह क्या बैठकखाना बनाने को तुमारी भलाई के लिये कहता है। सो नहीं,

वह अब भी महल्लें में इधर उधर घूमता रहता है, तब भी महल्लेही में टक्करें मारता रहेगा। तब क्या कि, बैठकखाना बन जाने से उसका हिस्सा मिलेगा, मेरा गहना बनने से जुदा होने के बेला उसे गहने का हिस्सा बंट कर नहीं मिलेगा। तुमे न समझाने से तो तुम समझते नहीं। क्या बिना जाने बूझे तुमें मूरख कहती हूं ?

दुर्गा प्रसाद—देख आज तू ने सचमुच ही मेरी आंखें खोल दीं। इतने दिनों बाद अब समझा कि किस लिये भाई साहब जब तब सब कामों से पहले बैठक बना डालने को कहते हैं। लक्ष्मी तू ने ठीक बात कही है। मैं यदि पहले जानता तो नीव भी नहीं डालता, एक ईंट नहीं गंथने देता।

लक्ष्मी—तुम तो मेरी बात नहीं मानते, पूछते भी नहीं, तुम जी में यही समझे बैठे हो कि तुमारा भाई जानो राम का भाई लछमन है। पर वह भरत है, यह तो तुम नहीं जानते, भाई भी कभी अपना हुआ है ? मैंने पंडाइन से सुना है कि भाई भाई जुदा जुदाही अच्छे होते हैं।

दुर्गा प्रसाद—बस बैठक का बनना यहीं तक रहा,

देखें कौन करता है ? और क्या कहती थी भौजाई जी की बात क्या कहती थी ?

लक्ष्मी—कहती थीं क्या कि मालकिनी मालिक को मन्तर सिखलाती हैं। उनके सामने कोई बात में क्या ठहरेगा ? वह इसी चाल में लगी रहती है कि, कैसे मेरी बात बिगड़े, बेइज्जती हो।

दुर्गा प्रसाद—क्या मेरा अपमान ? जिसका खायंगे, उसी को बदनाम करेंगे, उसीका अपमान करेंगे ?

लक्ष्मी—वह कौन कहे ?

दुर्गा प्रसाद—किसने क्या कहा ?

लक्ष्मी—बाकीही क्या छोड़ा ? तुम सुनके झूठ मानोगे, आज एक बिसाती आया था, सोहन सोहिनी बड़ी जिद्द करने लगे, किसी तरह माने नहीं, उस महल्ले वाली पंडाइन से दो पैसे उधार लेकर, उन लोगों को दो बंसरी खरीद दी थी, छोटी बहू ने यह देख के, गुस्से में भर के, वहां से आके, मोहन को बुलाके, एक बंसरी लेदी; दाम देने के बेर बोली कि बबेजी एक पैसा उधार दोगी ? सूद दूंगी, मैंने कहा एक पैसे का सूद ब्याज क्या ? मैं तो नहीं जानती, छोटी बहू बोलीं, क्यों सदा महा-

जनी करती हो, आज नहीं जानती । मेरे तो सुनके छक्के छुट गये, इसके बाद उसके मुंह में जो कुछ आया, उसने ऊंची नीची आड़, पताड़, सब कह सुनायी ।

दुर्गा प्रसाद—क्या क्या कहा ?

लक्ष्मी—मुझे उतना सब याद नहीं है, मैं भोली भाली, मैं उतनी बातों की हेर फेर नहीं जानती, उस महल्ले की सब कोई थीं, उन लोगों ने सुनाही है । तुम जो सुना चाहो तो कल पंडाइन को बुलवा लेऊंगी, उसके मुंह से सब कुछ सुन लेना ।

दुर्गा प्रसाद—हां ! यह सब सुननाही उचित है, कल पंडाइन को जरूर बुलवा लेना ।

लक्ष्मी—बुला तो लाऊंगी, कल की बात कल होगी, जब आंख कान खुले हैं, तब एक निकास करना ही होगा, अब एक बात पूंछू हूं, सच कहोगे ?

दुर्गा प्रसाद—क्यों नहीं कहूंगा ?

लक्ष्मी—क्या सचमुच चंद्रहार की साई दी है ?

दुर्गा प्रसाद—हां दिया है क्यों ?

लक्ष्मी—तुमरी बातों से जान पड़ता है कि नहीं दिया है ।

दुर्गा प्रसाद—तो नहीं दिया है ॥

लक्ष्मी—तब क्यों झूठ कहा ?

दुर्गा प्रसाद—आज झूठ कहा है, पर कल सच्च हो जायगा, कलही सुनार को बुलाकर ब्याना दूंगा, यह बिचार रहा था कि पहले बैठक का काम पूरा करूंगा, पर तुम से जो सब बातें सुनी, उससे इस पर एक ईंट भी आगे नहीं धरने दूंगा, आप मेहनत करके कौन किसको हिस्सा दिया करता है ?

(नेपथ्य में शब्द)

लक्ष्मी—भगवान तुमें सुमति दें। झरोखे के पास कौन खट खट करता है ?

दया—मैं हूं बड़ी ठकुराइन, पीढ़ा सामने पड़ा हुआ है, उसे उठा कर रक्ख रही हूं, यह तो हुआ, बड़े बाबू संधा पूजा आज नहीं करेंगें ?

लक्ष्मी—हां तू जा, मैं दिए उनका ठीक कर दूंगी ।

दुर्गा प्रसाद—चलो कपड़ा उतारें, संध्या पूजा की जाय (जाते जाते) मेरी सम्पत्ति पर टकटकी, लक्ष्मी तेरी बुद्धि की बलिहारी है !

(दोनों का प्रस्थान)

प्रथम अङ्क।

पंचम गर्भांक।

घर का चौक।

(सरस्वती, दया, पंडाइन और मोहन)

(सरस्वती और दया का प्रवेश)

दया—तुमको देश निकाला होगा, देश निकाला होगा, मैं होती तो फांसी देती, बड़ी ठकुराइन, बड़ी दयावान हैं; इससे देश निकाला ही होगा; फांसी नहीं।

सरस्वती—क्यों दया क्या हुआ है ?

दया—क्या हुआ है? बड़ी ठकुराइन की दुबली देह दिनों दिन विचारी फूलती जाती हैं, कब है, कब नहीं; उसे तुमने ऐसी बात कही है कि विचारी घंटों बेहोश पड़ी रही।

सरस्वती—क्या दया तू ने भी क्या सच माना ?

दया—तो सच न माने कैसे ? यह क्या नहीं मानने की बात है, या यह जिसकी तिसकी बात है? बड़ी ठकुराइन ने बड़े ठाकुर से कहा है; उनोंने क्या अपने मालिक से भूठ कहा है ? फिर घरवाले भी कैसे? एक तो बाम्हन, दूसरे उमर में बड़े।

सरस्वती—देख दया, हर घड़ी ठठोली अच्छी नहीं लगती; मुझे क्या हर घड़ी हंसी भाती है ? तुझे क्या कुछ सुध बुध भी है ? अभी कोई सुन पावेगा। धीरे धीरे बात कर।

दया—इससे जादा मैं कैसे धीरे बोलूं ? हां हां मेरे में कुछ सुध बुध नहीं है। क्या जानती हो छोटी ठकुराइन, इस घर में कानाफूसी ही एक गुन है। यही गुरमन्तर है; तुमने तो कानाफूसी सीखी नहीं, तो उसका गुन क्या जानोगी ? छोटे बाबू घर आये, तुम से हंस के दो बातें कीं, तुम भी पास जाबैठीं, वह भी हंसे बोले; तुम भी हंसी बोली; उनोने कुछ कहा सुना, तुम भी पिघल गयीं, वह भी परसन्न हुए, बस मिट गया। देखो तो इस घर में एक भले आदमी की बेटी है। दिन रात कानाफूसी करके अपना काम निकाल लेती है। तुमही खाली लड़कखेल में पड़ी हो।

सरस्वती—देख दया! मुझे ऐसी बात मत कहो, मेरे भाग में जो कुछ लिखा है, उसे कौन मेट सकता है ? मेरे भाग में भगवान ने सुख न लिखा होगा तो मुझे कौन सुखी कर सकता है ? दया, मेरी मा लड़कई में

मुझे कितनी ज्ञान की बातें सिखलाती थीं । उपदेश देती थीं, वह मर गयीं, स्वर्ग में गयीं, वह तो अब नहीं हैं । पर दया उनकी कही बातें आज भी मुझे भूली नहीं हैं । दया मेरी मा मुझ से कहती थीं कि मा बाप लड़की को कुछ दिन पालते पोसते हैं । पर बेटी ! ससुरारही अपना घर होता है, सास ससुरही मा बाप होते हैं, सास ससुर जेठ जिठानी ननद पर मा बाप से बढ़ के भक्ति करनी चाहिये । स्वामी को देवता सी पूजा करना । बेटी ! स्त्री का भूषण लज्जाही है । जो किसी स्त्री के शरीर पर कोई गहना नहो और वह लज्जावती हो, वह जो नम्र हो; उसीसे उसकी कितनी शोभा होती है । दया, मेरी मा कितनी बातें कहती थीं । वे कहती थीं कि बेटी, जिस गृहस्थी में झगड़ा होता है, दांता किल किल होती है, वहां से सुख भागता है, वहां धन लक्ष्मी का भी वास नहीं रहता ।

दया—रहने दो इन बातों को किसी दिन छुट्टी की बेला सुनूंगी, अब बताओ मोहन कहां है ?

सरस्वती—भीतर सोया है ।

दया—छोटे बाबू महल्ले से...,

सरस्वती—उस महल्ले में आज रास होगी, आज रात को घर नहीं आवेंगे।

दया—तब क्या आज तुम को छुट्टी? अब चलो, हम तुम और मोहन, सब कोई मिल कर कानाफूसी करें।

सरस्वती—पर मुझे बड़ा सोच हो गया है, सब दोष मेरे सिर पड़ेगा। क्या करूं दया? वह तो घर में नहीं हैं। वही जी में क्या समझेंगे? दया तू एक बार जाके उनको बुला लावेगी?

दया—कहां से बुला लाऊंगी? वह कहां हैं, कोई जानता है?

सरस्वती—वह रास में हैं, मुझ से कह गये हैं कि, रास देखने जायंगे, रात को नहीं आवेंगे॥

दया—वहां क्योंकर जाऊंगी? इतनी भीड़ में मेरे को घुसनेही कोई क्यों देगा?

सरस्वती—यह आज नयी पहलेही रासकी भीड़ में घसने जायगी कि नहीं? पहले जानो कभी भीड़ में गयी नहीं है?

दया—तुम से तो बातों में नहीं जीतूंगी। लो चलो।

(दया का प्रस्थान)

सरस्वती—दया तो गयी, जान पड़ता है कि वो अभी आवेंगे, हे माता संकट हरणी संकटे ! देखो, मैं ने कुछ दोष नहीं किया है। सिर क्यों घूमता है ? तो यहां जरा लेट रहूं । (सोना)

(पंडाइन का प्रवेश)

पंडाइन—मुझे कहने को कहा है, मैं कहूंगी । इस में मेरा दोष क्या है ? अच्छी बात कहला भेजती तो वह भी तो कहती । इस से मेरे पर गुस्से होगी; ऐसा क्या अखतियार है? अब जाऊं मुझे जो कहने को कहा है, वह कहूं । वह तो यहांही पड़ी घुर्राटे ले रही है । क्या आज कृष्ण घर में नहीं है? इसी से राधा विरह में पड़ी लोट रही है । छोटी बहू, ए छोटी ठकुराइन!

सरस्वती—(स्वप्नावेश में) मोहन ! मोहन !

पंडाइन—अरे दैया ! रंगढंग तो देखो । राधा विरह में अलाप रही हैं। सोये सोये मोहन मोहन; बलिहारी! अरे छोटी ठकुराइन, अरे छोटी जनी, मर गयी क्या ? आग लगे ऐसे सोने में। गिरस्थी की बहू बेटी का ऐसा सोना क्या, अरे छोटी ठकुराइन, अरे ?

सरस्वती—कौन पंडाइन, क्यों क्या है जी ?

पंडाइन—नहीं, ऐसी कुछ बात नहीं।

सरस्वती—भगवान बचावें।

पंडाइन—क्या समझी मेरे को कुछ दोष नहीं देना, मैं क्या करूं मुझ से तुम एक बात कहला भेजो तो लक्ष्मी से जाकर कहना होगा। और वह कुछ कहला भेजेगी तो तुम से आकर कहना होगा। माई मुझे गाली मत देना; मैं सीता हरण की मारीच बनी हूं।

सरस्वती—पंडाइन, उन सब उपमा से क्या काम है? उनोने तुम से जो कहने के लिये कह दिया है, वह कहो। तुमरी बातों के बांधनू से मेरे प्रान चौंक उठे हैं। देह कांप गयी है।

पंडाइन—हां थोड़ी सी चौंकनेही की बात भी है, तो जब कहना ही है, एक साथही बोलना अच्छा होगा। लक्ष्मी कहती है कि, एक साथ रहने से नित उठ कर झगड़ा होता है, इससे क्या लाभ? आज से तुम जुदा, वह भी अलग। जुदा २ बनाओ खाओ रहो, मेरा क्या भाई, मैं कहके हलकी हुई।

सरस्वती—पंडाइन क्या कहती हो, अब क्या होगा, भाईजी ने भी क्या यही बात कही?

पंडाइन—अरे पगली, क्या शिव शक्ति के विना मिले कोई काम हो सकता है वेटी ?

सरस्वती—पंडाइन अब क्या उपाय होगा ?

पंडाइन—उपाय मैं क्या वतलाऊंगी, वह सब तुम जानो । दुर्गा प्रसाद ने मुझ से कहा कि, तुम आज रसोई न कर देओगी तो हम लोग भूखे मर जायंगे । वह मांदगी से कुछ काम नहीं कर सकती । कल से कुछ वन्दोवस्त करेंगे । सोई आज मैं रसोई करके जाऊंगी, मेरा क्या वहिना, तुम वुलाओगी तो भी आना होगा । हां दुर्गा प्रसाद ने यह भी कह दिया है कि, आज के दिन तुम लोग गोशाला के कोने में रसोई कर खाओ, कल दूसरा कुछ ठीक कर दिया जायगा । तो मैं अब जाती हूं ।

(पंडाइन का प्रस्थान)

सरस्वती—मझधार में डूबी, मैं जिस बात से डरती थी, वही हुई । वे तो इन बातों का भेद कुछ जानते नहीं, तो फिर आकर वे क्या समझेंगे, वे क्या मेरी बात पर विश्वास करेंगे ? हे भगवान ! तुमने यह क्या किया ? मैं जिस डर के मारे, इतने दिनों तक सब सहती रही, उसका क्या यही फल हुआ ? अरी दया भी तो अभी तक

नहीं आयी ? तो क्या नहीं मिले ? तो क्या वे रास में नहीं गये हैं ? तो क्या होगा ? हाय रे भाग, वे भी आज घर नहीं हैं, वही तो अब क्या करूं ? जिस डर से मैं डरी मरती थी। वही बात आगे आयी; उसी विपद में फस गयी।

(दया का प्रवेश)

दया—क्योंजी आज तुम को छुट्टी—आज क्या पंडाइन इधर रसोई करने को भेजी गयी हैं ?

सरस्वती—दया तुझे बेले कुबेले का विचार नहीं है। जब तब हंसी ठठोली क्यों करती है ?

दया—तो क्या हंसूं नहीं रोऊं ?

सरस्वती—आज भाई जी ने हम लोगों को जुदा कर दिया है, पंडाइन आज उन लोगों के लिये रसोई बना रही है, अब क्या होगा, यही सोच रही हूं।

दया—हाँ जुदा कर दिया है ? बड़े भाग कि, मैं बाबू लोगों की मा न भयी, नहीं तो न जाने क्या गत होती; अंत में गंगा मिलनो भी कठिन हो जाती। तो भी मैं सांझे की दासी हूं, मेरा कैसे बटवारा होगा ? जानती हो छोटी ठकुराइन ?

सरस्वती—तेरे हाथ जोड़ती हूं । चुप कर, हंसी ठट्ठा अच्छा नहीं लगता । क्या वे मिले ?

दया—उनको तो सब कुछ कहा, उनोने तो हंस के बात उड़ा दी, कहा जा, जा, एक वहाना बनाके रास देखने आयी है । चल मैं आता हूं !

(मोहन का प्रवेश)

मोहन-मा, मा, भूख लगी है; बड़ी भूख लगी है ।

सरस्वती—यह तो पहलो पहल है, क्या होगा ?

दया—वेटा मोहन तनिक ठहरो खाने को देती हूं । (सरस्वती के प्रति) चलोना नहाने धोने नहीं जाओगी ?

सरस्वती—अब क्या होगा ?

दया—भगवान हैं, कुछ उपाव होही जायगा ॥

प्रथम अङ्क ।

षष्ट गर्भांक ।

रसोई घर

(पंडाइन सोहन, मोहन, दया, काली प्रसाद, सरस्वती और दुर्गा प्रसाद)

पंडाइन—(सूप से चावल फटकती हुई) मैं ऐसी ऐसी दस गृहस्ती का काम चला सकती हूं, हां !

यह क्या रसोई है, और कामही क्या है, मैं पहलो पहल ससुरार गयी तो मैंने अकेले पांच सेर चावल की देगची उतारी थी, अकेली कूटती पीसती थो, मसाला पीसती, चूल्हा बालना, परोसना, खिलाना, पिलाना, सब अकेली करती थी, यह डोकरी मुझे चीन्हती नहीं, मुझे पहचानती तो इनको फिकिर किस बात की थी? पर अब लच्मो ने मुझे कुछ कुछ पहचाना है।

(सोहन और मोहन का प्रवेश)

मोहन—यह क्या खा रहे हो भैया?

सोहन—मिठाई।

मोहन—मुझे थोड़ी सी दोगे? बड़ी भूख लगी है।

सोहन—भाई देने से मा गुस्से होगी।

मोहन—मा क्यों गुस्से होगी भैया? मैं जब जो खाता हूं, तब तुम को देता हूं; मेरी मा तो कुछ नहीं कहती।

सोहन—मैं भाई अभी नहीं दे सकूंगा, बड़ा होऊंगा तो दूंगा।

मोहन—मैं क्या सदा छोटा रहूंगा, बड़ा होने पर मैं तुम से क्यों मागूंगा?

(इधर उधर देख कर मोहन को सोहन दिया चाहता है)

पंडाइन—सोहन, सोहन, ठहरो मैं देख रही हूं, अभी तुमरी मा से कहूंगी ।

सोहन—तू क्या कह देगी ? मैंने तो किसी को दिया नहीं, मोहन भाई नहीं, दे नहीं सकता, (मिठाई का टुकड़ा मुंह में डाल लेता है)

(दया का प्रवेश)

दया—मोहन यह लो मिठाई खाओ ।

मोहन—सोहन भैया मुझे मिठाई मिल गयी, चलो हम लोग गुरूजी के पढ़ने चलें ।

(सोहन और मोहन का प्रस्थान)

पंडाइन—दया कहां गयी थी, मिठाई कहां पायी ?

दया—मिलेगी कहां से ? मोल लायी हूं, महल्ले की रांड़ बुढ़िया मरें तो मिठाई मिल जाय, नहीं तो कहां से मिलेगी बहन ?

(दया का प्रस्थान)

पंडाइन—डोकरी की ऐंठन देखो, भरो ! एक से एक बढ़ के ।

(कालो प्रसाद का प्रवेश)

कालीप्रसाद—आज क्या ही सुप्रभात है। जय जगन्नाथ, अहिल्या, कुन्ती, तारा, मन्दोदरी, द्रौपदी, आज स्वयं माता अन्नपूर्णा चौके में विराजमान हैं, आज तो रसोई का रंग ढंग देख कर मेरा धैर्य च्युत हुआ जाता है, पंडाइन तृषित चातक बचनसुधा याचना करता है, बात कर तृषा दूर करो (हाथ जोड़ कर) दीन जन को कष्ट देना महत को उचित नहीं, यदि मेरा कुछ दोष हुआ हो तो व्यवस्था तुम्हारे हाथ है। मैं अपराधी हूं, हजूर में हाजिर हूं, भुजपाश से बांध के दंड दो।

(रोती रोती सरस्वती का प्रवेश)

यह क्या तू क्यों रोती थी? रानी! मोहन कहां है, वह अच्छा है ना?

सरस्वती—मोहन खेल रहा है। डरो मत, मोहन राजी खुशी है।

काली प्रसाद—सोहन सोहिनी?

सरस्वती—वे लोग भी खेल रहे हैं।

काली प्रसाद—तू रोती है, पंडाइन का मुंह भारी है, क्या बात क्या है?

सरस्वती—भाई जी ने हम लोगों को जुदा कर दिया है।

काली प्रसाद—ओह ! यही बात, इसी के लिये। क्या कहा, भैया ने हम लोगों को जुदा कर दिया है ?

सरस्वती—हंसो नहीं, पंडाइन से कहला भेजा है, तुम पंडाइन से पूछो ना ।

काली प्रसाद—क्यों जुदा कर दिया ?

सरस्वती—मैं तो और कुछ नहीं जानती, मेरी समझ में बिसाती के आने पर जो सब हुआ था; उसी से गुस्से हो गये हैं ।

पंडाइन—मैं किसी बात में नहीं हूं; कुछ जानती जनती नहीं ।

(पंडाइन का प्रस्थान)

काली प्रसाद—हां दया रास के वहां कुछ कह रही थो सही, वह बड़ी छोटी बात है, तुच्छ बात है, इसके लिये डर काहे का ? भैया के घर आने ही से सब मिट जायगा, शायद उनोने सब बातें सुनी नहीं हैं, सुनते तो ऐसा नहीं करते ।

सरस्वती—माता संकटा करें कि ऐसाही हो । तुमरा कहना सच हो । तुमरा मुंह मीठा कराऊं ।

काली प्रसाद—मुंह तो पीछे मीठा होगा, पहले थोड़ा

सा तेल लगा कर जल डालूं, सिर तो गीला हो, रात जाग कर जी ठीक नहीं रहा, तेल दे लगा कर नहा आऊं।

सरस्वती—पंडाइन रसोई घर में तेल का कुल्हड़ा है?

(आगे बढ़ती है)

लक्ष्मी—(नेपथ्य से) सब कोई मिल कर हमारे रसोई घर की ओर क्यों गये, हम लोगों के रसोई घर में कोई क्यों जायगा ?

काली प्रसाद—तो तेल नहीं चाहिये, दया आवे।

सरस्वती—अरे बाबा ! भाई जी तो इधरही आ रहे हैं।

(सरस्वती का घूंघट काढ़ कर प्रस्थान)

काली प्रसाद—क्यों भैया, हमें क्या जुदा होने को कहा है ?

दुर्गा प्रसाद—हां इकट्ठे साथ रह के कलह बिबाद सहा नहीं जाता, यदि जुदा होने से झगड़ा निपट जाय, रगड़ा शेष होय, यही बिचार कर जुदा होने को कहा है।

काली प्रसाद—किस के दोष से झगड़ा होता है, उसकी जांच करने से अच्छा होता न ?

दुर्गा प्रसाद—तो क्या बिना बिचारे जुदा होने की बात कही है ?

काली प्रसाद—क्या तुमने ही सुना है, मैं ने नहीं सुना है ?

दुर्गा प्रसाद—क्यों नहीं सुना, कल एक बिसाती आया था, तुमरी भौजाई ने पंडाइन से दो पैसे उधार लेकर सोहन और सोहिनी को दो बंसरी ले दीं, छोटी बहू ने कहा, बेबेजी एक पैसा उधार दो, मैं ब्याज दूंगी, यह क्या अच्छी बात हुई है? मैं तुम से ही पूछता हूं।

काली प्रसाद—अच्छा पहले...,

दुर्गा प्रसाद—चुप करो पहले मेरी बातें सुन लो, पीछे जो कहना हो कहना। पैसा नहीं था, यह तो जानती थी, फिर भी उधार मांगा, खैर तो उसका सूद ब्याज क्या ? इसका जबाव यह हुआ कि, तुम तो महाजनी किया करती हो। देखो मैं एक बात कहता हूं, मैं किसी को लक्ष्य करके नहीं कहता हूं, मैं दोनों ही को कहता हूं, मैं एक को नहीं कहता हूं, यह जो कुछ उधार क़रज किया जाता है, उसको कोई बाप के घर से लाकर चुकाती है ?

काली प्रसाद—आपने जो कहा, वह ठीक है। कोई बाप के घर से नहीं लाती, पर आपने घटना जिस प्रकार सुनी है, वैसी नहीं है।

दुर्गा प्रसाद—उसका प्रमाण क्या ?

काली प्रसाद—प्रमाण और क्या होगा, यह तो कोई मुकदमा नहीं है। पर हां वहां पर जो लोग थीं, वे सभी जानती हैं।

दुर्गा प्रसाद—वहां पंडाइन थीं। मैं ने उनसे ही सुना है, उससे तुमारी बातही झूठी जान पड़ी।

काली प्रसाद—किसने कहा कि, मेरी बात झूठी है ?

दुर्गा प्रसाद—पंडाइन ने। मेरी बात पर विश्वास न हो पंडाइन तो दूर नहीं हैं, रसोई घर में हैं, उनसे पूछ सकते हो।

काली प्रसाद—पूछने की जरूरत नहीं, पंडाइन ने जो कहा है, वह तो त्रिकाल में झूठ होने का नहीं। मैं तो तुमारा कुपोष्य ही हूं।

दुर्गा प्रसाद—ये सब दुलरुया बातें बहुत हो चुकीं। आज जुदा रसोई कराके खायंगे, कल तुम लोगों के लिये रसोई घर ठीक कर देंगे, और जमीन जायदाद, धन सम्पति चार भले आदमियों को बैठा कर हिस्सा पत्ति कर लेंगे।

काली प्रसाद—पंचायत बुला कर क्या होगा, भैया,

मैं तुमसे झगड़ूंगा नहीं, तुम तो सब जानते हो, जो कुछ मुझे देओगे, वही लेके सन्तोष करूंगा ।

(काली प्रसाद का प्रस्थान)

(लक्ष्मी का प्रवेश)

लक्ष्मी—देखा, घमंड । तुमने एक आधो बात कही सही; यह नहीं कि वह मिठास से नरमाई के साथ मिन्नत विन्ती करे, सो नहीं; अपनी हेंकड़ी में ऐंठता चला गया ।

दुर्गा प्रसाद—अहंकार अब कब तक ठहरेगा ? जल्दी ठंढा हो जायगा ।

(सब का प्रस्थान)

द्वितीय अङ्क ।

प्रथम गर्भांक ।

घर का चौक

(लक्ष्मी, दुर्गा प्रसाद, गोमती, लवड़घूंराम, सोहन)

(लक्ष्मी और दुर्गा प्रसाद खड़े हैं)

लक्ष्मी—अरे मर रांड़ ! डोकरी क्या कमती पाजी है ? बड़ी हरामजादी है । उस पंडाइन को कौन नहीं जानता ? पहले जानती तो क्या बुला के लाती, रांड को झाड़ू

मारती तो मेरा जी ठंढा होता, बड़ी चोट्टी है। रोज रोज नोन, तेल, घी, आटा, दाल चोरी करके बेचती है; आज जान पाया, इसी से वज्जात को निकाल बाहर किया।

दुर्गा प्रसाद—तुम कब किसको स्वर्ग में चढ़ाती हो और कब किसको नरक में धकेलती हो? जानना मुश्किल है। अब देख पड़ता है कि खाने बिना मरना होगा, तुम तो बीमार रहती हो, तुम से रसोई न हो सकेगी; मुझ में भी रसोई बनाने की शक्ति नहीं, अब क्या उपाय होगा?

लक्ष्मी—इस बात की तुमको इतनी चिन्ता क्या है? तुमें समय पर खाने पीने को मिलनेही से काम है ना?

दुर्गा प्रसाद—मेरे निज के खाने पीने का ऐसा सोच नहीं है, लड़के बाले कहीं खाने बिना दुख न पावें।

लक्ष्मी—पराये से कहीं काम चलता है? कल मा को बुलाऊंगी। मैं कष्ट पाती हूं, सुन कर क्या वह रह सकेंगी, दौड़ी आवेंगी।

दुर्गा प्रसाद—किस को? मा को! मा आवेंगी? मैं ने क्यों काली को जुदा कर दिया?

लक्ष्मी—तुमने जुदा कर दिया? तुम्हीं उसका कारन

जानते हो । मैं ने जुदा भी नहीं किया, मैं उसका कारन भी नहीं जानती, (मुंह चिढ़ाकर) "क्यों काली को जुदा कर दिया"! क्यों जुदा किया था । यह तुमही जानो, मेरा क्या दोष ? मैंने तो कहा था, कि मुझे पेके पहुंचा दो, अब भी कहती हूं, बाप के घर भेज के तुम लोग सब इकट्ठे हो जाओ । एक बार जुदा होने से फिर जनम भर मिलना नहीं, इकट्ठे नहीं होना; ऐसा तो नहीं है ।

दुर्गा प्रसाद—मैं ने तो और कुछ नहीं कहा केवल····।

लक्ष्मी—केवल क्या ? मैं ऐसी टेढ़ी बेढ़ी बात नहीं समझती । जो कहना हो, एक दम साफ कह दो । मैं सिर खपाती हूं, तुमरेही भले के लिये। मेरा क्या ? मैं यहां रहूंगी, तो भी मुझे बिना खिलाये नहीं रह सकोगे, वहां जाऊंगी तो वे लोग भी बिना खिलाये आप नहीं खायंगे ।

दुर्गा प्रसाद—सोहन कहां गया, सोहिनीही कहां गयी ?

लक्ष्मी—सोहन अपने मामा के घर गया है, सोहिनी वह सोयी है ।

दुर्गा प्रसाद—सोयी है, तो क्या आज कुछ खायगी नहीं ?

लक्ष्मी—क्या खायगी, कौन वनावेगा ?

दुर्गा प्रसाद—और कौन वनावेगा मैंही चूल्हा फूकूंगा। सब ठीक तो किया हुआ है न ?

लक्ष्मी—ठीकठाक क्या करना है, उस वेले का सब ही धरा है, थोड़ी सी खिचड़ी वना लो और न वना सको तो कल की बासी रोटी है, वही खालो। आज मेरी पीड़ा कुछ बढ़ गयी है, पेट में दरद सी हो रही है।

दुर्गा प्रसाद—अहा ! तो तुम क्या खाओगी कहो तो के दो चार पूरी कर दूं ? जाऊं चौके के धंधे में लगूं। (स्वगत) खूब ही सुख हो रहा है। (प्रकाश्य) सोहन से कह देता कि तुम्हारी मा को भी साथ ले आता (प्रस्थान)

लक्ष्मी—उनसे खिचड़ी बनवा लेती तो अच्छा होता।

(लवड़धूंराम, गोमती और सोहन का प्रवेश)

लवड़धूराम—लठमी लठमी हम लोड आये हैं, मा टूटो उस दिन टहटी ठीटि, लठमी टो डया माया नहीं है, टभी बुला नहीं भेजटी ओड़ ठाने पीने टी टीज भी नहीं भेजटी डेखो टो बुला भेजा है।

गोमती—लवड़धूं ! तुझे क्या जनम भर अक्कल नहीं आवेगी, मैं ने कब ऐसी बात कही थी ?

लवड़धूं—हां मुझे अट्टल नहीं है, टुम टो टो है, वस हुआ पड़ंटू टुमटो याड नहीं ड़हटा यह वड़ा डोष है, उम डिन तुमने यह वाट टही; आज टहटी हो नहीं, अभी उस दिन मुझ से टहाटि मठली ले आ, मैं ने टहा वहन ने डाल भेज डीटी, वही पटाओ, टुमने टहा नहीं है, फेड़ उसटे वाड वही डाल निटली टैंसे ट्यों ?

गोमती—लवड़धूं, तेरी अक्कल एक दम से मारी गयी, मैंने तुझे कितना समझाया था, तोते की तरह पढ़ाया था।

लवड़धूं—टोभी अच्छा, टुमने टहा, टेड़ी अट्टल माड़ी डयो है, टो मेड़ी एट वठट अट्टलठी डटने डिनटो यही टहटे मड़टी ठोटि मेड़े अट्टल नहीं है।

लक्ष्मी—नहीं तेरे में वड़ी अक्कल है।

लवड़धूं—अब आंठें लाल टड़टे टिसटो डिखलाटी है ?

गोमती—लवड़धूंराम !

लवड़धूं—ट्यों लवड़ढूं, येटो मैं ठड़ा हूं टुमड़े

डड़से भाड़ूंडा नहीं, लवड़ ड़ाम भाडने वाला नहीं है, टिपटू जड़ि विड़टृ टड़ोडी टो सब बाटें ठोल डूंडा, बहन टुमाड़े ढड़ में टमांठू उमाठू नहीं है? हैं बहन टुमने सोहन टो टमाठू पीना क्यों नहीं सिठलाया?

लक्ष्मी—सोहन दूध का बच्चा है, वह क्या तमाकू पियेगा?

लवड़धूं—ट्यों ट्यों ट्या डूढ पीने से टमाटू नहीं पीना? बहन, मैं टुमाड़े ढड़ आया हूं; डूढ भी पिऊंडा, टमाठू भी पिऊंडा। टमाठू पीना नहीं सीठने से लोडों टे पास टैसे बैठेडा?

गोमती—चलो अबेर हो गयी थोड़ीसी खिचड़ी बना दूं।

लवड़धूं—अब फिड़ टिचड़ी टी ट्या जलडी है, अभी टो ड़ष्टे में डो पैसेटा चबैना चाबटा फांटटा आया हूं। अब टिचड़ी उचड़ी डड़टाड़ नहीं है। सोहन सोहन टुम ठोड़ासा टमाठू भड़ो टो भाई। टमाठू ट्या आप भड़ टे पीना होडा?

गोमती—कहां लक्ष्मी! कहां तमाकू कहां हैं? बतलाओ तो बेटी।

लक्ष्मी—सोहन उस कोठरी में चौकी के नीचे पड़ा

है, और चौघरे में टिकिया, दिया सलाई है, लाके भर दे बच्चा।

लबड़धूं—जाओ मा टुम तमाटू भड़ो। मैं वहन टे टड़ टड़ अच्छी टड़ह डेटलूं।

(सब का प्रस्थान)

द्वितीय अङ्क।

द्वितीय गर्भांक।

जनाना चौक

(सरस्वती, मोहन, दया, बूंदी, काली प्रसाद, दुर्गा प्रसाद, और लबड़धूं राम)

सरस्वती—सवेरे से बच्चा मेरा गुरुजी के पढ़ने गया है, अब आतेही खाने को मांगेगा, अब मैं क्या दूंगी? कहां? घर में तो कुछ भी नहीं है। हे भगवान! यह चिन्ता भी मुझे घेरेगी, यह बात सुपने ने में भी नहीं सोची थी। वह मोहन आ रहा है। खाने को····

मोहन—मा मा मुझे बड़ी प्यास लगी है मा, थोड़ा सा पानी दे; दे मा।

सरस्वती—मोहन बच्चा! (रोती है)

मोहन—क्यों मा रोती क्यों है मा, मुझे तो भूख नहीं लगी है, खाली प्यास लगी है, खाली जल पीके सो रहूं, सोने से भूख नहीं लगेगी मां।

सरस्वती—बेटा तू क्यों मेरे पेट से जन्मा था? मुझ सी अभागिन के पेट से नहीं पैदा होता तो तुझे इतना दुख काहे सहना पड़ता?

(दया का प्रवेश)

सरस्वती—मोहन ने मुझे रोते देख। बच्चे को भूख लगी है, यह नहीं कहा, बोला "कि मा मुझे प्यास लगी है।" दया, दया, मेरे मोहन को इसी उमर में दुखने सताया।

दया—क्यों यह देखो, खाने का वन्दावस्त करलायी हूं, उसके लिये तुमको फिकिर नहीं करनी होगी (डोना दिखाती है)

सरस्वती—अरी दया, दया! यह सब कहां से लायी?

दया—तुमे इस से क्या काम?

सरस्वती—तूही इसकी सच्ची मा है।

दया—तो तुम क्या इसकी बुआ हो?

सरस्वती—वह मेरे पेट से जन्मा है सही, पर तू ने ही उसे जिलाया है।

दया—तुम भी जैसी, चलो अब मोहन को खिलाऊं।

(लक्ष्मी और बूंदी का प्रवेश)

लक्ष्मी—बूंदी ये कपड़े किसके हैं ?

बूंदी—छोटे भैया के कपड़े मैले हो गये हैं, बाहर आ जा नहीं सकते, इसी से चट पट धो, बना के ले आया हूं ।

लक्ष्मी—कपड़े बिना बाहर नहीं निकल सकते, और जादा होता तो न जाने क्या करते ?

बूंदी—मा जी वह सब आप लोग जानें, मैं क्या जानूं ?

लक्ष्मी—क्या महीना पाता है ?

बूंदी—बरस में पांच रुपये देने की बात है ।

लक्ष्मी—देने की बात है ! पर अभी तक पाया नहीं है ?

बूंदी—कहां मा जी, आज कल करते एक बरस बीत गया । आज कल अन्न सस्ता था, ले रखता, जाऊं आज मागूं देखूं क्या कहते हैं ?

लक्ष्मी—मागेगा या लेना है ?

बूंदी—न देंगे तो कैसे अदा करूंगा ?

लक्ष्मी—मेरी बात माने तो आजही सब मिल जाय ।

बूंदी—सुनूंगा, कहिये ।

लक्ष्मी—तू हाथ में कपड़े लिये रहियो और बोलियो कि रुपया नहीं मिलेगा तो कपड़े न दूंगा, दे तो अच्छा हो है, नहीं तो कहियो, कि जिस के पास धोबी के देने को पैसा नहीं है, वह क्यों सोकीनी करता है?

बूंदी—ऐसा कहने से जो कहीं रिसिआ जायं तो?

लक्ष्मी—उसके रिसिआने से तुझे डर काहे का? उससे रुपया न मिले तो जाने की वेला कपड़े मेरे पास रख जाइयो, मैं तुझे दो रुपये अभी उधार दूंगी,।

बूंदी—अच्छा मा जी आप लोगों का तो खाताही हूं।

(लक्ष्मी का प्रस्थान और सरस्वती का प्रवेश)

बूंदी—कहां हैं छोटी बहू जी? कपड़े तो लाया, पर कुछ धुलायी बिना दिये काम नहीं चलेगा।

सरस्वती—बूंदी, तू आज जा, वे दिवानजी के गये हैं, वहां से जरूर कुछ लावेंगे, कल तू आवेगा तो कुछ खरच पावेगा।

बूंदी—आज मुझे न देने से काम न चलेगा।

सरस्वती—बूंदी! आज कुछ पास नहीं था, इससे हम लोगों का सवेरे से खाना पीना नहीं हुआ, होता तो क्या तेरे से झूठ कहती?

बूंदी—जिनका पैसे विना खाना पीना वन्द है, उनके हाथ में सोने के कड़े क्यों ?

सरस्वती—हे भगवान ! बूंदी, ऐसाही मनाओ कि, हाथ के कड़े सोने के हो जायं, अब क्या सोना नाम को भी है ? एक एक कर सब गहने बिक गये, ये हाथ के कड़े पीतल के हैं ।

बूंदी—छोटी बहू ! मैं तुम से कुछ न मागूंगा, मेरा कसूर माफ करो, मैं ने अपनी मर्जी से यह बात नहीं कही, किसी के बहकाने से आप का जी दुखाया है, जिसने सिखलाया है, वह तुमारा अपनाही है । नहीं मा जी, वह बात तुमको नहीं सुनाऊंगा, जब खुशी रुपया देना, मैं कभी नहीं मागूंगा ।

(दोनों का प्रस्थान)

(लक्ष्मी का प्रवेश)

लक्ष्मी—दया, दया, आज तुम लोगों के यहां क्या रसोई बनी है ?

(दया का प्रवेश)

दया—जो विधाता ने दिया, वही बना है ।

लक्ष्मी—भला ऐसाभी क्या ? पहली मालकिनी जान कर तूने तो एक दिन खाने को भी नहीं कहा ?

दया—कहना क्यों होगा? भाग में होगा तो आपही होगा।

(काली प्रसाद का प्रवेश और लक्ष्मी का अन्तराल में जाना)

काली प्रसाद—क्योंरे दया, किस से वार्त्तें करती थी?

दया—बड़ी ठकुराइन से, हम लोगों के क्या क्या बना है? पूछ रही हैं।

काली प्रसाद—देखा अकिल देखी, जाऊं भैया के पास, वे सुन कर क्या कहते हैं देखूं?

(सरस्वती का प्रवेश)

सरस्वती—नहीं तुम को कहीं जाना न होगा, तुम कहीं नहीं जाओ, उनकी जो खुशी कहने दो। जहां काम को गये थे वहां क्या हुआ?

काली प्रसाद—रानी वह बात मेरे से मत पूछो। आज तक जो नहीं हुआ था वही हुआ। जिनोने रुपया देने को कहा था, उनसे भेंट न भयी, उनोने जानबूझ के मुलाकात नहीं की। बाबू के बैठक खाने में शराब कबाब चल रही है, प्याले निवाले की ठहर रही है, उनके टहलिये खानसामा ने मुझे चोर, जुआ-चोर, लुच्चा, बदमास, शराबी, चण्डूखोर जो जी में आया कह सुनाया।

लक्ष्मी—अरे दया ! आज तुम लोगों के घर इतना हौरा धूम क्यों है ? क्या किसी को नेवता दिया है क्या ?

काली प्रसाद—सुना, अक्ल देखी, नीच लोग भी ऐसा वर्त्ताव नहीं करते।

सरस्वती—छी छी ! ऐसी वातें मुंह पर मत लाओ, हजार हो, बड़ी तो हैं।

काली प्रसाद—काहे की वड़ीं, मैं जाता हूं भैया के पास, देखूं वे क्या कहते हैं ? भैया भैया !

लक्ष्मी—अजी देखोजी, तुमरा भाई मुझे मारने आता है।

(दुर्गा प्रसाद का प्रवेश और सरस्वती का घूंघट काढ़ना)

दुर्गा प्रसाद—कौन है ?

काली प्रसाद—भैया ! एक विचार करना होगा, वड़ी भावीजी के जो मुंह में आ रहा है, कह रही हैं, और ठट्ठा कर रही हैं।

लक्ष्मी—वह देखो शराव पी आया है, विना पिये मतवाले सा क्यों बर्त्तेगा ?

दुर्गा प्रसाद—हमारे पास मतवाला पन नहीं चलेगा, जाके सो रहो, जो कुछ कहना हो; कल सुनूंगा।

काली प्रसाद—क्या शराबी पना देखा? मैं मतवाला हूं, या तुम मतवाले हो?

दुर्गा प्रसाद—क्या तू ने मुझे मतवाला कहा? निकल हमारे घर से; अगर ऐसा करेगा, तो रहने को जो कोठड़ी दी है, उसे भी छीन कर निकाल बाहर करूंगा।

काली प्रसाद—कोठड़ी! मानो भीख दी है?

दुर्गा प्रसाद—अभी भी खड़ा मतवालापन कर रहा है, टीमल! इस मतवाले को पकड़ के थाने में पहुंचा आ तो।

काली प्रसाद—टीमल को क्यों कहते हो? तुमी आओना।

दुर्गा प्रसाद—खड़ा रहो! खड़ा तो रहो! आता हूं।

(अग्रसर होना)

सरस्वती—तुमरे हाथ जोड़ती हूं, तुमरे पैरों पड़ती हूं, चले आओ, चले आओ।

(काली को पकड़ कर खींचती हुई सरस्वती का प्रस्थान)

(लबड़धूंराम, दुर्गा प्रसाद और लक्ष्मी का प्रवेश)

लक्ष्मी—कोठड़ी में घुस के कुंडा चढ़ा लिया है।

लबड़धूं—जीजा जी! बहनोई बाबू! टिसे ठाने में पहुंचाना होडा? टीमल ट्यों जायडा? मैं जाऊंडा ट-

होना, मैं जाजंडा, ठाने टे सब लोडों से मेड़ी मुलाटाट है, ठाने टे सब आडमी मेरे हाट हैं।

लक्ष्मी—थाने के किसके साथ तेरी मुलाकात है, लवड़घूं ?

लवड़घूं—ट्यों ट्यों ! मेरी ठानेटे डारोडा फिडा-महम्मड से डोष्ती है। एट साठ बेठना उठना है, बहनोई बाबू, टुम यह मट समझना टि, भले आडमियों से मेरो मुलाटाट नहीं है। हां मैं भी भलेमानसों टे साथ बेठटा हूं, हैं जीजा जी, टुम राज में जिन बाबू टे नीचे टाम टरटे हो, वहां मेड़ी एट नौटड़ी चाटड़ी टराडोना। टुम चाहो तो टड़ा सटटे हो, टुमड़े बाबू टो टुछ डेठ टे सुनटे नहीं। टम से टम सौ ड़ुपये महीने टी नौटड़ी टराडोना, टुम चाहो टो हो सटटी है; टुमरे बाबू टो टुछ डेठ टे सुनटे नहीं, वह मैं जानटा हूं। मैं अपने नामटा हिज्जे टरटे नाम छूट-ठट टर सटटा हूं। डोना डोनो टुमरा बाबू टो मट-वाला होटे पड़ा ड़हटा है, मैं जानटा हूं।

दुर्गा प्रसाद—बस चुप कर, तू बड़ा जमामर्द है।

लक्ष्मी—जाओ लबड़घूं तुम सो—

लवड़धूं—ट्या मैं अभी सोऊंडा ? वाह, वाह, टुम टो अच्छी आडमी हो। मैंने टीन डिन से डुली डंडा नहीं ठेला, इससे विमाड़ हो डया हूं।

लक्ष्मी—क्यों लवड़धूं, तेरे को क्या पीड़ा है ?

लवड़धूं—वाह पड़सों में टवड़ो हाड़ डया।

लक्ष्मी—उसकी बात सुनके क्या होगा, वह पागल है।

लवड़धूं—हां पाडल नहीं टो ट्या ? हम वड़े पाडल हैं, टुम लोड नहीं।

द्वितीय अङ्क।

तृतीय गर्भांक।

सरस्वती की कोठड़ी

(सरस्वती, काली प्रसाद, दया और मोहन)

काली प्रसाद—इस घर में रहने का प्रयोजन नहीं है। मैं इस घर में चिराचि वास नहीं करूंगा।

सरस्वती—भाग में जो होगा, वह भोगनाही पड़ेगा और कहां जाओगे ? घर में रहने से जी में ढाड़स रहती है, अब रोना छोड़ो, आंखें पोंछ डालो, रोने से क्या होगा ?

काली प्रसाद—एक वात कहूंगा रानी ! विश्वास

करोगी ? मैं अपने लिये इतनी चिन्ता नहीं करता; कुछ दुखी नहीं हूं, मुझे सब दुख तुमारा है और इस छोकरे के लिये, यदि तुम मेरे पाले न पड़ती तो तुमे इतना दुःख सहना नहीं पड़ता । तुमरा रोना देख कर मेरा हिया फटने लगता है । क्या करूं रानी ? मैं फकीर हूं, मैं नराधम हूं, मैं पशु से भी नीच हूं, तुम इतना न चाहती, इतना प्रेम न रखती, इतना प्यार न करती, इतनी नेह न लगाती, मेरे दुख से इतनी दुखित न होती, और अन्य स्त्रियों की भांति लड़ायी झगड़ा करती तो मुझे इतना कष्ट न होता । रानी, इतने दिनों तक मैंने तुमे कुछ नहीं कहा है । अब कहता हूं । तुमने आप अपने हाथों से जब एक एक कर गहना उतार के बेचने को दिया है, तब मेरे जी में होता था कि मानो मैं अपने अंग की एक एक हड्डी नोच कर ले जा रहा हूं, क्या करता ? बिना बेचे काम नहीं चलता, इसी से लाचार होकर बेचा, नारायण साक्षी हैं, उस गहने के रुपये का अन्न हमें खाने में विष के समान जान पड़ा है । पर क्या करें ? हमारे न खाने से तुमें और भी कष्ट होता, निश्चय मानो, जो तुम हमें इतना न चाहती तो हमें इतना दुःख न होता । अब

तुम हमारी एक बात मानो कि, कुछ दिनों के लिये अपने नैहर बाबू जी के पास जाकर रहो, और दया कहीं अपनी चाकरी खोज के पेट भरे, वह विचारी क्यों हम लोगों के साथ पिसे ?

सरस्वती—मेरे पेके जाने से जो तुमारा कष्ट कम हो जाता तो बाप का घर क्या, नरक में जाती, तुम जहां कहते; मैं वहांही चली जाती। पर इस दशा में छोड़ कर मुझे स्वर्ग में भी सुख न मिलेगा। जब जी में यह आवेगा कि तुम भूखे हो, तब कैसे मेरे मुंह में गिरास धसेगा, हां दया को जो बात कही, वह करना उचित है। वह काहे हम लोगों के साथ रह कर दुख भोगे ? तुम दया को बुला के कहो ना।

काली प्रसाद—दया ! दया !

(दया का प्रवेश)

काली—दया! हम लोगों ने बिचार कर ठीक किया है, कि हम लोगों के साथ रह कर तुम कष्ट न भोगो "गेहूं के साथ घुन क्यों पिसे ?" महीना मिलना तो दूर किनारे रहा, दोनों बेला पेट भर अन्न भी तुम को नहीं मिलता तुम और कहीं नौकरी चाकरी ढूंढ़ लो। भगवान दिन पलटेंगे तो फिर आना।

दया—मैं ने क्या महीना मांगा है, या महीना पाने की आस में रहती हूं ? मुझे रुपये नहीं चाहिये, मुझे चाहो जो कुछ समझाओ, मैं मोहन को छोड़ कर नहीं रह सकूंगी, जो मैं तुम लोगों को बोझ जान पड़ती होऊं तो तुमरे यहां अब से नहीं खाऊंगी, पर मोहन को छोड़ कर मुझे जाने के लिये न कहना ।

काली प्रसाद—दया रो मत ठहरो, मैं जो कहता हूं, अच्छी तरह समझो, हम लोगों के साथ रहना और उपवास करना एकही है । मोहन को बिना देखे तुम नहीं रह सकती, सच है, परन्तु और किसी गृहस्थी में रहने से भी लड़के वालों से हिलमिल जाओगी; वहां जी लग जायगा, दूसरी जगह जाने को जी नहीं करेगा ।

दया—लड़के वाले मिल जायंगे, सच है, मैं अपने उसके जैसा कहीं न पाऊंगी ।

काली प्रसाद—दया ! ठहरो, ठहरो ।

दया—मोहन सरीखा मेरा भी एक लड़का था, चाव से मैं ने भी उसका नाम मोहन रक्खा था, यहां रहने से वह मेरा मोहन नहीं है, यह भूली रहती हूं । मैं यहां से कहीं न जाऊंगी । अजी मोहन को छोड़ कर मुझे रहने के लिये मत कहो ।

(दया का प्रस्थान)

काली प्रसाद—इसका क्या उपाय होगा ?

सरस्वती—मैं अभागिन हूं, जो मुझ दुखिया के मोहन पर दया करेगा, वह दुख पावेगा। बेटा मोहन ! दयाही तेरी मा है, दयाही तेरी मा है।

(रुपयों का बटुआ हाथ में लिये दया का प्रवेश)

दया—देखो मेरे पास कुछ रुपये हैं, यह विचारा था कि मोहन को दे जाऊंगी, यह लो। तीन वीस छ रुपये हैं।

काली प्रसाद—दया ! दया ! (खड़े हो कर) भैया ! भैया ! देख जाओ, मा के जाये भाई, तुमने मुझे अलग कर दिया है, हम लोग भूखे मरे जाते हैं। इस पर तुमने ध्यान नहीं दिया और दया सामान्य मजूरनी, उसके संचित समस्त अर्थ से हम लोग प्राण रक्षा करने में उद्यत हैं। दासी के अन्न प्रत्याशी हैं। भैया ! तुम धनी, मानी, ज्ञानी सम्भ्रान्त बन के सभों में परिचित हो, पर भैया तुम देख जाओ ! आज तुमारा सहोदर भाई, तुमारे सन्मान की कैसी बृद्धि कर रहा है ! आज तुमारी भ्रातृ-बधू, दासी के अर्थ से जीविका

निर्वाह के लिये उद्यता है। तुमारा भ्रातष्पुत्र दासी के अन्न से प्राण धारण करेगा, भैया तुम लखपति, करोड़ पति, तुम सुन्दर महलों में पलंग पर मखमल की गद्दी तकिये पर सुख निद्रा से सो रहे हो और तुमारा भाई, भतीजा, छोटी भौजाई, उदरान्न के लिये तरस रहे हैं। तुमारी स्त्री हीरे, पन्ने, मानिक, मोती के जड़ाऊ गहनों से—सोने चांदी से लदी राजरानी की भांति बनी बैठी है। तुमारी स्त्री बनारसी जरदोजी साढ़ियों की नित नयी बहार लेती है। तुमारी भौजाई फटी धोती से जीवन का सार धन लज्जा निवारण में भी असमर्थ है। भैया! सामान्य दया के चित्त में भी जो दया माया है, तुमरे हृदय में यदि उसके शतांश का एकांश भी होता तो आज तुमारे छोटे भाई को स्त्री पुत्र सहित लंघन न करना पड़ता।

दया—छोटे बाबू सभी बात में अत्त करते हैं। यह क्या मेरा रुपया है। वह तो—

काली प्रसाद—दया! तुमारा यह रुपया एक दिन भी नहीं खाऊंगा, ऐसा कभी नहीं करूंगा। मैं पुरुष हूं, मेरे हाथ पैर हैं। जब कि भगवान ने हमारे

शरीर में बल दिया है, शक्ति दी है, तब फिर मैं क्यों निश्चेष्ट रहूंगा ? मैं यदि स्त्री पुत्र के लिये सिर पर बोझ उठाऊं। खचिया ढोऊं; उसमें मुझे लज्जा नहीं है। उसमें मुझे अपमान नहीं है। क्या करूं गृहस्थ के लिये सब करना होता है, इस में मुझे कौन दोष देगा ? (स्वगत) देखो ! दया, जाति में ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य नहीं है, शूद्र है, सामान्य पर-अन्नप्रयासी दासी है, पर दया के हृदय में इतनी दया है कि, इसे साक्षात दयामयी जगज्जननी कह सकते हैं, दया वास्तव में दया का अवतार है, इसकी दया अपार है, ईश्वर सभी गृहस्थ विपन्नों को ऐसी दया-मयी दासी के पाले डाले। जगन्माता जगम्बा हैं, तो दयाहीसी हैं। दया में उनही की छाया वर्तमान है। दया में भगवती माता का प्रतिविम्ब प्रस्फुटित है।

दया—क्यों छोटे बाबू सिर पर बोझ क्यों ढोना पड़ेगा ? तुम तो गाना बजाना जानते हो, तुम किसी रासधारी की जमात में जाकर काम करो।

काली प्रसाद—रासधारी के अखाड़े में ?

दया—क्यों इस में दोष क्या ? देखो ना कितने

बाम्हन के लड़के परदेस जाकर, रास करते हैं, उस में हानि क्या है ?

काली प्रसाद—दया ! ठीक कहा है । वही अच्छा है, दया तू सचमुच मेरी उपकारी है, मैं अभी जाऊंगा ।

सरस्वती—ओह ! एका एक ! अभी इसी घड़ी ? (क्रन्दन)

काली प्रसाद—हां रानी ! शुभ उद्देश्य में विलम्ब करना उचित नहीं । "शुभस्यशीघ्रम्" ।

सरस्वती—तुम जाओगे, पास पैसा नहीं, बन्धु नहीं; कैसे जाओगे ? कोई अपना नहीं । मैं-मैं-मैं क्यों कर ।

काली प्रसाद—मुझे अपने आत्मीय बन्धु की आवश्यकता नहीं है, बहुतेरे आत्म बन्धु देखे हैं; आत्म बन्धु लोगों से यथेष्ठ प्रतारित हुआ हूं । अब दीन बन्धु पर निर्भर करता हूं ।

सरस्वती—मुझ सी अभागी कौन है, किसका स्वामी ऐसी बुरी दशा में पड़ता है, मैं क्योंकर अकेली रहूंगी ?

काली प्रसाद—मैं जाता हूं, लौटूंगा या नहीं ? इसका कुछ ठिकाना नहीं है, एक बार मोहन को उठाओ, उसका मुख चन्द्र देख जाऊं ।

सरस्वती — मोहन, मोहन; एक बार उठो बच्चा ! देखो कौन बुलाता है ? देखो बच्चा ।

मोहन — (उठकर) कौन मा, कौन मा; कौन बुलाता हैं ? बाबूजी, बाबूजी; रोते काहे हो, दया मा तू भी क्यों रोती है, बाबूजी बाबूजी मा क्यों रोती है ? मुझे तो भूख नहीं लगी है !

सरस्वती — नहीं बेटा मैं तो नहीं रोती हूं ।

मोहन — बाबूजी तुम मुझे बुलाते थे, क्यों बुलाते थे ?

काली प्रसाद — मोहन मैं आज जाऊंगा, इसी से तुझे देखने के लिये बुलाया है ।

मोहन — क्यों बाबूजी ! कहां जाओगे ? क्यों जाओगे ?

काली प्रसाद—तुमारे लिये रुपया लाने जायंगे ।

मोहन—नहीं बाबूजी, तुमारे पांव पड़ता हूं, मत जाओ, मैं बड़ा होऊंगा तो बहुत रुपया लाऊंगा, बाबूजी !

काली प्रसाद—मोहन ! तेरी बातें सुनकर मेरे दुख दूर भागते हैं, नहीं बेटा तुम घर में रहो, मैं जाऊंगा।

मोहन—नहीं बाबूजी मैं तुम्हें जाने न दूंगा ।

काली प्रसाद—रानी, रानी ! जाने की वेला मत रो रानी ।

सरस्वती—नहीं मैं नहीं रोती, मै नहीं रोती। (रोना)

काली प्रसाद—रानी ऐसे रोनां भीखना करोगी तो मेरा जाना नहीं होगा, एक बार मेरी ओर देखो मैं जाऊं।

सरस्वती—जाओगे जाओगे,—अरे मा ! मेरा तो और कोई नहीं है।

काली प्रसाद—क्यों तुमारा मोहन है, उसे देखना; मुझे मत रुलाओ रानी ! मैं जाऊं।

सरस्वती—तुम जाओगे, जाओगेही, जरा ठहरो, एक बार तुमे देखूंगी। (काली प्रसाद के गले लगना) मुझे भूलना नहीं, भूलना नहीं ?

काली प्रसाद—रानी ! अब मुझे मत रुलाओ, मुझे जाने दो।

सरस्वती—तुमे जाने दूं, तो किस के पास यहां रहूंगी, तुम यह बतलाओ ना ?

काली प्रसाद—रानी, मैं ही सुखी हूं, तुम सी जिस की स्त्री है। वह सुखी नहीं तो क्या ? तुम्हें देखकर इतने दिनों तक प्राणधारण किये हुआ हूं। रानी तुझे अधिक क्या कहूं। तुम स्नेह में जननी हो, ममता में भग्नी हो, प्रणय में स्त्री हो। रूप में साक्षात लक्ष्मी

हो, गुण में यथार्थ सरस्वती हो, और ममता, माया में तुमने महा माया को भी अतिक्रम किया है ! रानी तुम सरीखी स्त्री ! किस के भाग्य में है ? तुमरे ऐसे उद्विग्न होने से, ऐसे घबराने से ! मोहन की क्या दशा होगी ? देखो रानी, मेरा मोहन है, इसका पालन करो। भगवान ! मैं तो जाता हूं, दयामय ! मेरे अदृष्ट में जो कुछ हो। देखो नारायण ! इस शत्रु पुरी सदृश स्थान में मेरी रानी और मोहना रहे, देखो दयामय ! दीनबन्धो ! इनके सब कोई बर्तमान होने पर भी मानो कोई नहीं है। तुमही एक मात्र सहायक हो। रानी और क्या कहूं ? भगवान तुमे जीवित रक्खे, लौटकर तुमे देख पाऊं। जगदीश्वर ! दया हम लोगों की जीवनदात्री है, देखो दीनपालक इन तीनों को तुमारे चरणों में छोड़कर जाता हूं। हे हरि ! दया सागर ! अनाथ बान्धव ! विघ्न विनाशन ! बिपद हरण ! बिपद, सम्पद में मुझे अभागे के इन तीनों को—चरणों से न छुड़ाना।

मोहन—दया ! मा ! बाबू जी कहां भाग जायंगे ?

(सबों का प्रस्थान)

द्वितीय अङ्क ।

चतुर्थ गर्भांक ।

घर का पिछवाड़ा ।

(लक्ष्मी, गोमती, दया और लवड़घूंराम)

गोमती—हेंरी लक्ष्मी ! तेरा देवर कहां गया ?

लक्ष्मी—क्या तुमने नहीं सुना ? कहीं देशत्यागी हो गया है ।

गोमती—कहां गया, कहां गया ?

लक्ष्मी—मथरा में सेठों के नोकरी करने गया है । हें ! नौकरी पड़ी हुई है ! उसके लिये नौकरी झखमार रही है ! जानती हो, पास फूटी कोड़ी भी नहीं, चाहे तो जाते जातेही; चाहे मथरा पहुंचेगा भी नहीं, रस्ते ही में........ ।

गोमती—मथुरा में पहुंचने पर नोकरी चाकरी लग भी सकती है । मेरे लवड़घूं को कितनी वार नोकरी करने की उमंग हुई । पर बच्चे मेरे को मेहनत नहीं सहती, जो मेरा लवड़घूं मेहनत कर सकता तो उसका धन कौन खाता ? गाड़ियों लाद के रुपैया लाता ।

लक्ष्मी—मा वह दया रांड़ आती है, उसकी डील चाल और ठसक देखो ।

(दया का प्रवेश)

लक्ष्मी—अरी ! ए दया ! तेरे छोटे बाबू मथुरा गये हैं ? वहां क्या नौकरी लगी, खजांची हुए या जज ?

दया—जो कहीं भगवान तुमें जीता रक्खेंगे और आंख कान बने रहेंगे तो देखोगी भी, सुनोगी भी।

लक्ष्मी—मा देखी रांड की नटखटी ! क्या कहा, क्या कहा ?

दया—नहीं पूछती हूं कि, आज कौन तिथि है ?

(दया का प्रस्थान)

गोमती—हां देखा बेटी ! देखा, भीतरी सिखावट है। नहीं तो क्या छोटे आदमी के मुंह से ऐसी बात निकलती है ? देखूंगी ! रांड़ को झाड़ू मारूंगी।

(दया का प्रवेश)

दया—कितनों ही ने देखा है, अब तुम बाकी हो, बात बात में झाड़ू मारोगी, आओना, मेरे भी हाथ हैं।

लक्ष्मी—मर डोकरी, वज्जात का जितना बड़ा मुंह नहीं, उतनी बड़ी बात। ले जाती हूं, तुझे दिखाती हूं।

दया—बहुतों को देखा है। (प्रस्थान)

गोमती—चुप करो बेटी, चुप करो, मैं जानती हूं,

तेरे से किसी की ऊंची नीची वात नहीं सही जाती । तू लड़कपन से बड़ी अभिमानी है । तू जब लड़कपन में अपनी मझली बहन से खेला करती थी। तब एक दिन तू ने खेलते खेलते लड़ायी की और झगड़ कर तू ने खेलने के घर को मिट्टी की दिवाल से अलग कर लिया था, यह देख कर तेरे बाप बड़े हंसे थे, बोले थे लच्मी मेरी बड़ी अभिमानी है । इसी उमर में खेल के घर को बांट लिया है । ससुरार जाकर बेटी मेरी अपना सब कुछ अलग कर लेगी । बेटी उनकी बात तो हाथो हाथ सामने आयी। वो स्वरग में हैं । उनकी बात क्या झूठी हो सकती है ? अच्छाही किया है, बेटी अपना अपना समझ बूझ कर सुख से गिरिस्ती करो । मुझे क्या ? बेटी ! देख के मेरा जी ठंढा होता है। तृपत होती हूं ।

लच्मी—तुम ये सब बातें मत कहो । मैं अपनी जलन से आप मरी जाती हूं । तुम क्या बकने लगीं ? मेरे भाग में क्या सुख है ? नहीं तो दाई हरामजादी कहनी अनकहनी कह जाती ?

गोमती—क्या करोगी बेटी ? मेरा लवड़धूं आवे, उसे कहके, उस डोकरी को ठीक करा दूंगी ।

लक्ष्मी—हां ! तुमरा लबड़धूं भी कोई काम का है ? वह क्या ठीक करेगा ?

(लवङधूं का प्रवेश)

लबड़धूं—जीजी ! जीजी ! टुम ट्या टहटी ठी जीजी ?

लक्ष्मी—जा उधर जा, तेरे सुध बुध होती तो तेरी ऐसी दुरगति क्यों होती, क्यों इतना दुख पाता ?

लबड़धूं—मुझे डुठ टाहेटा, हां पहले टुछ टुछ ठा, वह टिटने डिन ड़हा ? टुमड़े ढड़ में आया हूं, अब मुझे डुठ टाहेटा ? टैसा टुड़टा पहना है ? टैसी ढोटी पहनी है ? विलाइटी जूटा, पैड़ में चढ़ा है, टौभी टुम टहटी हो डुठ है । मुझे टुछ डुठ डड़ड नहीं है ।

गोमती—लवड़धूं तुझे अक्कल छू भी नहीं गयी । क्या कुछ भी अक्कल नहीं है ?

लवड़धूं—नहीं मेड़े अट्टल नहीं है । मेड़ी अट्टल डुम हो डयी है ।

गोमती—झूठ मूठ बक मत, काम की बात तो कुछ सुनता नहीं, एक काम है, तेरे बिना वह काम कोई न कर सकेगा ।

लवड़धूं—टो, मेड़े से टहो भी ! मैं ट्या नहीं टड़ सटटा; टहोना ट्या टड़ना होडा ?

गोमती—और कुछ नहीं, दया डोकरी को ठीक करना होगा, तेरी बहन को गाली दे गयी है।

लवड़घूं—ट्या मेड़ी वहन टो, डाली, ये ! ट्या ठहटी हो ? मुझे पहले टहनाठा, टो में उसटो डेठटा। चलाडेठूं सालोटी हड़म जडडी । ठड़ी ड़हो ! मैं अपनी लटड़ी लाऊं । (प्रस्थान और दंडा लेकर प्रवेश) जाओ टुम लोड सब टली जाओ, डेठूंडा आज ड़ांड़टो लठिया टड़ उसटा टाम टमाम टडूंडा । मेड़ा नाम लवड़ढूं ड़ाम है । टुम लोड जाओ । (लक्ष्मी, गोमती का प्रस्थान)

लवड़धूं—डया ! डया ! आ ससुड़ी डेटूं टेड़ो शेठी डेठूं ! टेड़े में टिटना जोड़ है, टूटिसटे जोड़ से लड़टी है ?

दया—(नेपथ्य में) कहां गया ? टुम कटा वाम्हन कहां गया ? (हंसुआ हाथ में लिये प्रवेश) आतो घुरकट वाम्हन ! आज तेरा नाक कान काटे बिना, मुंह में जल दूं ! तो मेरा नामही दया नहीं।

लवड़घूं—(डर से कांपता हुआ) ये ! टू मुझे टाट

डालेडी, टाटेडी, डेठ मैं टोटवाली में जाटा हूं, डाड़ोडा साहब टो बुला लाटा हूं।

दया—जा जहां तेरी मरजी, वहां जा, जो करते बने कर। (प्रस्थान)

द्वितीय अङ्क।

पंचम गर्भाङ्क।

(कोतवाली)

(कोतवाल, दारोगा फिदा महम्मद और कानष्टेबल)

कोतवाल—तो फिदामहम्मद! यह मामला अगर पकड़ा जा सके तो बहुत कुछ मिले।

दारोगा—जी हां! अगर पकड़ पायं तो ना ?

कोतवाल—तो अब की खूब हाथ जमें।

दारोगा—मगर हिस्से पत्ती में जरा खयाल रखियेगा, क्योंकि, सभी उम्मेदवार हैं; खास कर मैं।

कोतवाल—अच्छी बात है, बेशक, इस बारे में मैं हूं! मगर हां रोजनामचा दुरुस्ती के साथ लिख रखना।

दारोगा—वह सब मैं ठीक कर रक्खूंगा। बेमालूम हो जायगा।

(लवड़घूं का प्रवेश)

लवड़धूं—डाड़ोडा साहव ! डाड़ोडा साहव ! डया मजूड़नी मेड़ा नाट टान टाटना चाहटी है ।

कोतवाल—अरे ! तुम कौन हो ? दया कौन है ?

घवड़धूं—मैं डुर्डा वावू टा साला हूं ।

कोतवाल—तेरे वाप का क्या नाम है ?

घवड़धूं—वह टहने से टुम पहचान नहीं सटोडे। डया मजूड़नी मेड़े साठ झडड़ा टड़टे मेड़ा नाट टान टाटना चाहटी है ।

कोतवाल—फिदा महम्मद, तुम इसको जानते हो ?

दारोगा—जी हां । पहचानता हूं, वह दुर्गा प्रसाद वावू का निकम्मा बेवकूफ़ साला है । वहनोई के टुकड़े तोड़ता है, दुर्गा वावू ने भाई को घर से निकाल कर इसे मुतवन्ना लिया है ।

कोतवाल—पहले कहना था, आइये साला वावू ! तशरीफ़ लाइये ।

लवड़धूं—मैं ने टो टहा, टुम मेड़े टो पहचान लोडे, परंटू मेड़ा मुटडमा अच्छी टड़ह टड़ो ।

कोतवाल—बेशक तुम्हारा मुकदमा उम्दा तौर से करूंगा । यह तो बड़ा जुल्म है, तुम हो साला बावू ! तुमरे नाक कान काटना चाहती है ?

लवड़धूं—अन्याय नहीं है, बड़ा अन्याय है। आप इसटा सुविचाड़ टीजिये।

कोतवाल—तुमारे नाक कान काट लिये हैं, या काटने को कहती है ?

धवड़धूं—(नाक कान टटोलता है)

कोतवाल—पहले अच्छी तरह जांच कर देखलो, फिर दावा पेश करना।

लवड़धूं—टाटा नहीं है, पड़ उसने टहा है टि, टाटूं डी।

कोतवाल—एक औरत ने फकत कहा है कि, नाक कान काट लूंगी और तुम यहां दौड़ आये, तुमें शरम नहीं आती।

लवड़धूं—वह ट्या ऐसी वैसी औड़ट है, ? वह औड़ट नहीं है। औड़टोंटी डाडा है। ऐसा हंसुआ उठाया ठा टि, अडड़ डेठटे टो टुम भी भाडटे।

कोतवाल—सच कहना, तो तो उसे दुरुस्त करना मुनासिब है, तुम एक काम करो, वापस जाओ, जाकर लड़ो झगड़ो, पेश्तर तुमरे नाक कान काट दे, फिर यहां आना; नहीं तो मुकदमा चल नहीं सकता।

लवड़धूं—पहले अडड़ नाट टानं टाट डेडी टो ट्या लेटड़ नालिश डायड़ टडूंडा ?

कोतवाल—क्यों एक कान से ?

लवड़धूं—अच्छा टुम मेड़ा मुटडमा मट टड़ो, मैं जिले जाऊंडा ।

कोतवाल—ऐंसाही करो । ऐसे बड़े मुकदमे यहां नहीं हो सकते, (दारोगा के प्रति) इससे थोड़ा तमाशा करूंगा, देखोगे ?

दारोगा—आप की जैसी मरजी—

कोतवाल—हरि सिंह, इस पागल को गारद में दो; यह झूठा इजहार देने आया है ।

(कानिष्टबलों का लवड़धूं को पकड़ना)

लवड़धूं—टुम लोड नहीं जानटे मैं टौन हूं, ठहड़ो, तुम लोडों टो मजा डिठाऊंडा । मैं डुर्डा वाबूटा साला हूं, यह टुम लोड जानटे हो, मुझे डाड़ड में डेना सहज नहीं है ।

कानिष्टबल—अरे ! वाम्हन तू जो कर सके सो करियो, मेरा क्या ? मैं ने तो हुकुम माना है । पर तुम ज्यादे वात मत करो, दारोगा साहब ने कहा है कि, बहुत वात करोगे तो हथकड़ी डाल देंगे ।

लवड़धूं—हड़ि सिंह, टुमाडे पैड़ पड़टा हूं; मुझे छोड़डो।

क्रानिष्टबल—मुझे छोड़ देने का क्या अखतियार है?

लवड़धूं—टो एटबाड़ डाड़ोडा साहब टो बुलाओ।

कानिष्टबल—दारोगा साहब नहीं आ सकते।

कोतवाल—इसे हथकड़ी पहनाओ।

कानिष्टबल—जो हुकुम (हथकड़ी डालता है)

लवड़धूं—मैं ने उनटे बाष्टे इटना टुछ टिया ओड़ बे एट वाड़ मुझ से मुलाटाट भी नहीं टड़टे।

कोतवाल—क्यों तू फेर झूठा मुकदमा दायर करेगा?

लवड़धूं—नहीं टोट बाल बाबा! अब टभी नहीं टडूंडा।

'कोतवाल—तो तीन हाथ जमीन माप कर नाक रगड़ो।

तृतीय अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

हाथरस की सड़क।

(काली प्रसाद और बटुक नाथ)

काली प्रसाद—न जाने आज घर में क्या हो रहा

है ? ऐसी दुरवस्था उपस्थित होगी, इसका स्वप्न में भी ध्यान नहीं था । इसी वेला मोहन पाठशाला से आकर मेरी गोदी में बैठता था, अब इस दुर्भाग्य के भाग्य में वह सुख नहीं है । सांझ हो आयी, अब रस्ता नहीं चला जाता । इस पेड़ के तले तनिक बैठ लें ।

(उपवेशन)

(वटुकनाथ का प्रवेश)

काली प्रसाद—तुम कौन हो ?

वटुकनाथ—मैं बाम्हन हूं, अकेले परदेश आये हो; डरते क्यों हो ?

काली प्रसाद—ठीक कहा, परंतु मैं तो डरता नहीं हूं, तुमरा नाम क्या है ?

वटुकनाथ—मेरा नाम बटुकनाथ खत्री है, मैं बुड्ढा मल खत्री का लड़का हूं, मैं रेवती राम प्रयाग नारायण तिवाड़ी की प्रजा हूं, कानपुर में घर है ।

काली प्रसाद—ये तिवाड़ी कौन हैं ?

वटुकनाथ—क्या तुम इनको नहीं जानते ?

काली प्रसाद—तिवाड़ी लोगों को तो मैं नहीं जानता ।

वटुकनाथ—पहले राजा सदृश थे, गदर के समय

से वैसी बिभूति तो नहीं रही, पर अब भी ये लोग बड़े धनवान हैं। कानपुर में बड़ा मन्दिर है। धर्मार्थ है, ये लोग रामानुजी बैष्णव हैं। जाति के कान्यकुब्ज कुलीन ब्राह्मण हैं, देश परदेश में दुकाने हैं। तुमने इनका नाम नहीं सुना ? अचरज है।

काली प्रसाद—होगा, भाई मैं पहलेही परदेश निकला हूं। काशी में घर पर ऐसी कुछ सांसारिक चिन्ता नहीं थी, दुनिया की खोज खबर इतनी नहीं रखता था, गृहस्थ में मस्त रहता था।

बटुकनाथ—आप कौन हैं ?

काली प्रसाद—हम ब्राह्मण हैं, तुम कहां जाते हो ?

बटुकनाथ—जाऊंगा कहां ? रुजगार धन्धे की खोज में हूं, दुखड़ा क्या सुनाऊं ? हम चार भाई हैं, वे सब कुछ नहीं करते। मैं जो कुछ कमाता हूं, सब बैठ के खाते हैं, अकेला आदमी गृहस्थी का बोझ सम्हाल नहीं सकता, अब परदेश में निकला हूं; देखा चाहिये, विदेश में पैसा मिलता है या नहीं ?

काली प्रसाद — विदेश में पैसा है या नहीं ? देखना चाहते हो, पर देख पड़ेगा; इसका प्रमाण क्या है ?

वटुकनाथ—अरे गुण! गुण, इल्म, योग्यता, विद्या, उस्तादी, हिक्मत, लियाकत; गुण न होता तो कहता क्या? उस्ताद के आशीर्वाद से मुझे पेट भरने की चिन्ता नहीं है। अब अमीर होना बाकी है, जानते हो; मैं एक बड़ा कलामत हूं।

काली प्रसाद—हां! अच्छा एक बार बजाओ तो देखूं?

वटुकनाथ—देखोगे, सुनोगे, बजाऊं? (सारंगी बजाता है)

काली प्रसाद—(मुस्कराता हुआ) तुम गाना जानते हो?

वटुकनाथ—हां! हां (सारंगी के सुर में गीत) "सुनो भरत दे कान सुजस हनुमान जी को। गिरि सुमेर पर्वत के ऊपर सैन करें दोउ भाई। घेरे लंगूर वीर बैठे फहराई। चौकी कठिन कपीस की जहं पौनो की गम नाहीं।"

काली प्रसाद (हास्य)

वटुकनाथ—बड़े भैया कहते थे कि, बटुक हमारा गुदड़ी का लाल है, तुम लोग इसको क्या समझोगे? उस्ताद जी होते, या सिद्ध नाथ भैया होते तो वे

लोग समझते, लड़कों की तरह खिलखिला के हंसने से नहीं होता। हमारे को लखनऊ में कालका-विन्दा दस रुपया महीना देना चाहते थे, कितनी खुशामद करते थे!

काली प्रसाद—तुम कुछ लिखना पढ़ना भी जानते हो?

बटुकनाथ—लिखना क्या, कलम से लकीरें फेरना ही तो? यह, सहज बात है, और बजाना तो लकड़ी से बोल निकलना,! लिखना पढ़ना तो जब चाहे सीखा जा सकता है। पर बजाना सीखने में भगवान की विशेष कृपा चाहिये।

काली प्रसाद—तुमारा व्याह हुआ है?

बटुकनाथ—नहीं, कहीं सम्बन्ध करादो।

काली प्रसाद—बिना चेष्टा के कैसे कहूं? अब तुम कहां जा रहे हो?

बटुकनाथ—मथरा, वृन्दाबन में मयाराम रासधारी की जमात में, वह चार पांच बरस हुए कानपुर में गया था, मुझे दस रुपया महीना दिया चाहता था। उसके बाद मैं ने कितना कुछ सीखा है। एक आध

बाग उस्ताद जी को भी शर्माना पड़ा है । सिद्धनाथ भैया कहते थे कि, वटुकनाथ के हाथ में जैसी मिठास है, चींवटी चिमड़ जायगी । अब वीस रुपये नहीं तो पन्द्रह तो जरूर देगा, तो एक वरस के अंदर व्याह करलूंगा ।

काली प्रसाद—(स्वगत) वटुक पागल है, कहते हैं कि, पागल महा सुखी होता है, यह झूठ नहीं, इसकी दशा भी मेरीसी है, यह वजाना सजाना कुछ नहीं जानता; निरा मूर्ख है । तौभी मथुरा जाकर १५ रुपये मासिक प्राप्ति की आशा रखता है ।

वटुकनाथ—अरे महाराज क्या सोचते हो ?

काली प्रसाद—क्यों भाई वटुकनाथ ! तुम कभी परदेश निकले थे ?

वटुकनाथ—कहां....नहीं तो....क्यों ?

काली प्रसाद—तो तुम क्योंकर अकेले परदेश जा रहे हो ?

वटुकनाथ—क्यों ?

काली प्रसाद—कौन तुमको रस्ता बतला देगा ?

वटुकनाथ—राह चलतेही रस्ता वतला देते हैं, चुभा हुआ कांटा, कांटे से ही निकलता है ।

काली प्रसाद—(स्वगत) इसे साथ रक्खें तो अच्छा हो। पर अपनेही खरच का टोटा है, इसे भी खाने पीने का खर्च देना होगा, तो महीने भर का खर्च १५ दिनही में चुक जायगा (प्रकाश्य) वटुकनाथ तुम तो मथुरा में जाते हो, कुछ खरच पट्ठा साथ लाये हो? चुप क्यों हो?

वटुकनाथ—खरच वरच मध्ये यह सारंगी है। सभी तो गुन सुन के तुमरी तरह हंस नहीं पड़ते, रस्ते में अगर एक भी गुणग्राही मिल गया तो पांच दिन का खर्च एकही रोज में वटोर लूंगा। जिस गीत को सुन के तुम हंस पड़े, उसे सुन कर कितनों ही को रोना पड़ा है।

काली प्रसाद—मैं तो तुमारा गाना सुनके नहीं हंसा, सिर हिलाना देखके हंसा।

बटुकनाथ—तुम यदि गाना बजाना जानते तो ऐसी बात नहीं करते, ताल के मौके पर ताल विना दिये क्या कोई रह सकता है? गवैये, बजवैये होते तो जानते। उसे क्या कहते हैं, नहीं जानते? उसे कहते हैं; भाव बतलाना। समझे? गवैये बजवैये हो तो पूछना।

काली प्रसाद—हां पूछा जायगा। परन्तु मैं और एक बात विचार रहा हूं, मैं भी मथुरा जाता हूं; चलो न साथही चलें।

वटुकनाथ—अच्छी बात है, पर पहले एक निपटारा हो जाना चाहिये कि, हम गा बजा के जो कुछ रुजगार करेंगे, उसका हिस्सा तुमको न देंगे।

काली प्रसाद—अच्छी बात है, तो चलो।

वटुकनाथ—कहां जाओगे?

काली प्रसाद—क्यों, इतना बड़ा हाथरस शहर है, क्या इस में कोई सरांय नहीं है? अवश्य होगी, वहां हीं रात बितावेंगे।

वटुकनाथ—तो अच्छी बात है; चलो देर न करो; हां देखना! जब कि ऐसा हुआ, एक साथही जाना और रहना बैठना खाना पीना हुआ, तो तुम आज से मेरे दादाजी हुए। आज से तुमको दादा जी पुकारूंगा; तो दादाजी! चलो चलो उठो। मैं गाऊं, "सुनो भरत दे कान सुजस हनुमान जी को"।

तृतीय अङ्क।

द्वितीय गर्भांक।

मोदी की दुकान।

(मुदियाइन, कौलेज के दो विद्यार्थी, वटुकनाथ, काली-प्रसाद और मोदी।)

१ छात्र—हे भगिनी मुदियाइन! हम लोग तुमारी अपरूप मनमोहिनी मूर्त्ति देखकर परम पुलकित हुए हैं, भगिनी! तुम यदि हम लोगों के साथ जगज्जन मनो-लोभन सौधमयी महानगरी लाहोर में गमन करो तो तुमारा मन एक दम प्रेम वश से सुरसित होगा, वहां पर, उस आनन्दमय धाम में, थोड़े से प्रेम के बाजार हैं, वहां स्वाधीन प्रेम बिकता है। भगिनी! तुमसी सुशीला, सच्चरित्रा, साम्यवादिनी के आदर की सीमा न रहेगी, विशेष कर हम लोगों की समाज के भ्रातागण तुमको प्रति दिन अयाचित भाव से प्रेम दान करेंगे। यहां तक कि हम लोगों की समाज के बीच में स्वतन्त्र वास स्थान निरूपित होगा। अब तुमारा अभिप्राय क्या है?

मुदियाइन—इस में उजुर क्या है? बड़े का आसरा मिले तो, समाज तो समाज जंगल में भी जा सकूं हूं।

२ छात्र—नहीं, नहीं, ओह ! डरटी, क्रूएल्टी, डार्क, फौरेष्ट नहीं । भगिनी ! तुमरे समझने में भ्रम हुआ है । वह फौरेष्ट नहीं है, वह शांति निकेतन, प्रेम निकेतन, प्रेम कुंज है । वहां व्याघ्र नहीं हैं, सिंह नहीं हैं, रीछ नहीं हैं; वहां निरीह हस्ती और मेष हैं और अजारूपी गण सुख से बिचरण करते हैं एवं वहां पिता नहीं हैं, माता नहीं हैं; केवल भ्राता और भगिनी हैं । धरती पर स्वर्ग की सीढ़ी है । आप की यदि इच्छा हो तो परम मंगलमय परमेश्वर तुमारी और हमारी मनोवांछा पूर्ण करने में कदापि कृपणता नहीं करेंगे । हम लोग अना-यास निर्बिबाद ईश्वर के अभिप्रेत कार्य्य समाधा कर सकेंगे ।

मुदियाइन—जानते हो बाबू साहब ! अपने मन जैसा आदमी मिले तो सब कर सकती हूं ; उसकी दासी बन के रह सकती हूं ।

(गीत)

मैं जानती हूं कितना जतन,
जो कोई मिलावे प्रान रतन;
पाके मन का सा रतन,
करूं कितना जतन;

जो कोई रक्खे जीमें,
पूरी पकाऊं घी में;
प्रतिदिन हिये के भीतर,
खूब पकाऊं तीतर;
गुप चुप सुनूं मधुर प्रीति वचन,
पैर की पायजेब बजे झना झन;

१ छात्र—कुसंस्कार! कुसंस्कार! हिन्दू धर्म का घोर अत्याचार! सधवा, विधवा के मध्य परिचालिता है! भग्नी का हृदय पापपंक में निमज्जित है! भ्रष्टा होने का उपक्रम हो रहा है! ऐसे स्थल में भगिनी का पुनर्बिवाह कर देना कर्त्तव्य है।

मोदियाइन—तुम लोग क्या कहते हो? मैं समझ नहीं सकती।

२ छात्र—भग्नी! तुम हम लोगों के साथ सुर लय तान में परम पिता निराकार परमेश्वर का नाम गान और उनके श्री चरण की प्रार्थना करो। तुमारे मन से पाप छाया दूरी·······भूत होगी, हम लोग उभय भ्राता मिलकर तुमारे हृदय में बिशुद्ध बिमल स्वच्छ प्रेम रस संचारित करेंगे। प्रेम रस उपभोग करने से तुमरा हृदय पुलक से पूर्णीत होगा।

१ छात्र—अब भग्नी आओ हम लोग प्रेयर करें ।

(गीति)

(ईश्वर) तुम परम कारुणिक, भीषण दयालु,
तुमरी कृपा से बढ़ती दाढ़ी, जाड़े में खाते गोल आलू;
तुमरे नाम के गुण से पत्थर पिघलता,
पत्थर नहीं, वरफ टिघलता;
वरफ नहीं, घी गलता,
तुमरा नाम फराफर उड़ता;
मानो जमना की बालू,
तुम प्रसाद करते हो व्यालू;
करुणा का नहीं पारावार,
तुम हो यारों के यार;
हम भाई भग्नी सब चौंका घोलू,
प्रेम में होते निहालू;

(वटुकनाथ और काली प्रसाद का प्रवेश)

वटुकनाथ—अजी दादाजी, यहां आओ यहां आओ, यहां दो गुणीगण मिले हैं । चलो, चलो, चलो, गाओ, मैं सारंगी से सुर देता हूं । गाओ गाओ, ठहरो मत (सिर हिलाता और मुंह बनाकर गाता) "सुनो भरथ दे

कान सुजस हनुमान जी को"।

मुदियाइन—तुम लोग कौन हो?

काली प्रसाद—यहां दो आदमियों के रहने की जगह होगी?

मुदियाइन—आप लोग कौन जात हैं?

काली प्रसाद—एक ब्राह्मण और एक खत्री।

मुदियाइन—दोनों ब्राह्मण होते तो जगह हो जाती। दुकान में और दो ब्राह्मण हैं। इनके साथ तो और जात के लोग रह नहीं सकते। पर हां तुमरे साथ का आदमी उस पेड़ के तले रह सके तो यहां जगह हो सकती है।

काली प्रसाद—क्या कहते हो बटुकनाथ?

बटुकनाथ—देखो उसारे में जगह है, मैं वहां नहीं रहने पाऊंगा?

मुदियाइन—वहां गाय रहती है।

बटुकनाथ—तो गाय को पेड़ तले बांध के मुझे वहां ठहरने दो।

मुदियाइन—गाय को पेड़ तले बांध कर तुमें जगह कर दूं? तुम मानो मेरे गुरपुत्तर हो क्या? परदेश आना सीखे हो और पेड़ तले रहना सोना नहीं सीखे?

वटुकनाथ—भया, भया, चलो दादाजी, हम लोग शहर के भीतर कहीं ठिकाना देख लें। यहां टिकना न होगा।

काली प्रसाद—तुम जाओ, मैं यहां ही रहूंगा।

वटुकनाथ—रहो, आज भी रहो, कल भी रहो, मैं चला, तुम से मेरी अब भेंट न होगी।

(प्रस्थान और प्रवेश)

देखो ! परन्तु मैं चला, हां मैं जाता हूं, मैं किसी को कहके नहीं जाता हूं, ऐसा नहीं। मैं चला, मैं सच मुच ही चला; परन्तु जन्म भर के लिये चला। (प्रस्थान)

काली प्रसाद—इस रात की बेला वटुकनाथ ! तुम कहां जाओगे ? (स्वगत) आपही लौटेगा, या बुलाऊं ? नहीं; बुलाने से मिजाज बढ़ जाय।

(वटुकनाथ का प्रवेश)

वटुकनाथ—मेरा जाना नहीं हुआ, तुमको अकेले छोड़कर जाना उचित नहीं। क्योंकि बिदेश, उस पर तुमें दादा जी कहा है। यही सब सोच बिचार कर लौट आया हूं।

काली प्रसाद—अच्छा किया। क्योंजो रसोई कहां होगी ?

मुदियाइन—वह खुरपा पड़ा है, जमीन में चूल्हा खोद लो, टांड़ पर हंडी रक्खी हैं, एक उतार लो, सामने लकड़ी पड़ी है, लेलो और बनाओ खाओ। मैं जाऊं, इन दोनों के सोने का ठिकाना कर दूं।

काली प्रसाद—यदि मैं सब काम आपही कर लूंगा तो यहां ठहरने का लाभ क्या ?

मुदियाइन—यहां कोई लाभ न हो तो जहां हो, वहां जाओ। मैं तो तुम लोगों को घर से बुलाने नहीं गयी थी।

काली प्रसाद—इतना चटकने से काम कैसे चलेगा, तुम चटकोगी तो हम लोग खड़े कहां होंगे ?

मुदियाइन—तुमें प्रीति नहीं बघारनी होगी, खुरपे से चूल्हा खोद कर खाना बनाना हो तो खाओ; नहीं तो अभी से ठिकाना देखो।

काली प्रसाद—तू ने क्या समझा है कि, इस दुकान के सिवाय कोई दुकान नहीं है? जाते हैं तेरे यहां से।

(गमनोद्यत)

(खचिया सिर पर लादे मोदी का प्रवेश)

मोदी—क्या हुआ है, क्या हुआ है ? तुम लोग क्या गड़बड़ कर रहे हो ?

मुदियाइन—देखो ना दो वटोई आये हैं । जानो नवाव हैं । चूल्हा खोदकर रसोई नहीं वनाना चाहते।

मोदी—तुम····आप लोग कौन हैं ?

काली प्रसाद—ब्राह्मण ।

मोदी—प्रणाम, मैं चूल्हा खोदे देता हूं; वैठिये महाराज ! पधारिये देवता ।

(मोदी और मुदियाइन का प्रस्थान)

वटुकनाथ—मुदियाइन की ठसक देखोना, जगह न देगी, न सही, चलो हम लोग दूसरी दुकान देखें ।

दोनो छात्र—परमपिता, निराकार, परमेश्वर, करुणा-निधान, भयंकर-मंगलमय; ओंतत्सत् ।

(मोदी का प्रवेश)

मोदी—ये लोग कौन हैं ?

(मुदियाइन का प्रवेश)

मुदियाइन—ये लोग ब्राह्मण हैं, कालेज में पढ़ते हैं, अभी उन लोगों की कुछ नहीं कहना । ये लोग श्री कृष्ण जी का ध्यान कर रहे हैं ।

मोदी—हमारे यहां इनको किसने टिकाया ? ये लोग बाम्हन हैं । यह तेरे को किसने कहा ? सूझता

नहीं ? इन लोगों ने धर्म का जमघटा किया है, इन लोगों की क्या जात पात कुछ है ? (छात्रों के प्रति) अजी तुम लोग कौन हो ?

दोनो छात्र—हम लोग साम्यवादी हैं।

मोदी—यहां क्यों और कैसे पधारे ? अरे बाबा यह हाथरस तो सनातन हिन्दू वैष्णों का आश्रम है, यहां तो कुछ किरिस्तानी चाल चलन नहीं है, यहां तुम लोग क्यों आये ? जाइये, यहां आप की दाल नहीं गलेगी, धता होइये।

१ छात्र—हम लोग मथुरा के वार्षिक उत्सव में लाहोर से आये थे, वापिस जाते हैं, हम समाजी हैं।

मोदी—तुम क्या समाजी हो ? अरे समाजी तो बजवैये होते हैं।

२ छात्र—अरे हम लोग साम्यवादी हैं।

मोदी—सामवेदी ?

१ छात्र—अरे भाई यह मूर्ख है।

मोदी—क्या, मैं मूरख हूं ? तो भी झूठ नहीं बोलता, तुम लोग तो बड़े झूठे लबाड़ हो, बात का ही ठीक ठिकाना नहीं है, कभी कहते हो हम सामवेदी हैं, कभी कहते हो समाजी हैं।

२ छात्र—अरे साम्यवादी, साम्यवादी; हम में से एक कलवार और एक तेली, पर वेद पढ़ते हैं, जो वेद पढ़े वह ब्राह्मण, अब हम संस्कार से ब्राह्मण बन गये हैं।

मोदी—चलो निकलो चंपत हो, जिसकी बात का ठिकाना नहीं, उसका कुछ ठीक ठिकाना नहीं । तुम जैसे झूठे लोगों को यहां ठांव नहीं, सीधी तरह जाओगे या नहीं ? (जमीन पर सोंटा ठोकता है) यहां तुमारे धर्म का भंडेरियापना नहीं चलेगा, गाना, बजाना समाजी लोगों में जाके करना ।

१ छात्र—किसने कहा हम लोग धर्म के भंडेरिये हैं ? हम लोग गाने बजाने नहीं थे, संथा घोखने थे ।

मोदी—धर्म का जमघटा करो, चाहे संथा घोखो, यहां से चंपत हो, नहीं तो बुरी दुरगत करूंगा ।

(सोंटे की ओर निहारता है)

१ छात्र—भ्रातः, हे भगिनी मुदियाइन ! विदा होते हैं, शांतिः शांतिः शांतिः ।

१ छात्र—अरे चुप करो भाई, यहां भूत का डर भय तो नहीं है ?

२ छात्र—क्या जाने, मोदी भ्राता से पूछना चाहिये।

१ छात्र—क्यों भाई, यहां पर भूत जत का डर तो नहीं है ?

मोदी—भूत हुं: ! तुमही लोग तो भूत हो और भूत जत कौन ?

२ छात्र—चलो भाई राम राम बोलो, राम नाम लेते हुए चलो ।

१ छात्र—राम नाम लेने से हमारे साम्य धर्म में कुछ व्यघात तो न होगा ?

२ छात्र—नहीं, ऐसा नहीं हो सकता ।

बटुकनाथ—नहीं नहीं मत जाओ, तुम लोग अच्छा गाते हो, गाओ; मैं सरंगी से सुर देता हूं ।

१ छात्र—अब क्या गावें ?

बटुकनाथ—सरगम गाओ । मैं बतलाता और सुर देता हूं । (सिर हिला कर सरंगी बजाता और गाता है) गारेसारेगा, गासारेगा, पद नीके नीके गा, गारेसारेगा। सूर-दास के तुलसीदास के गाओरे पद नीके नीके गारेसारेगा।

(दोनों छात्रों का प्रस्थान)

काली प्रसाद—इनको तुम ठहराते क्यों थे ?

बटुकनाथ—क्यों भाई, ये लोग कौन थे ?

काली प्रसाद—तुम नहीं समझे ?

वटुकनाथ—नहीं।

काली प्रसाद—ये लोग लाहोर के हैं।

वटुकनाथ—कौन मजहवी हैं ?

काली प्रसाद—नहीं, नहीं, इन लोगों का एक नया मत चला है, उसमें से हैं।

वटुकनाथ—हां, हां, सुना है कि, इन में जात पात नहीं है, घास मास भोजन को एकसा जानते हैं। शूद्र को ब्राह्मण बनालेते हैं, जवन को भी अपने पंथ में मिलाके खान पान कर लेते हैं। रंडा व्याह चलाया है और धर्म्म के नाम से गाल बजाते हैं। इनकी औरत मानो मेम हैं, ये लोग आप मानो खानसामा हैं।

काली प्रसाद—हां हां ! ये लोग वही मजहवी हैं।

वटुकनाथ—क्या मजवी हैं ?

काली प्रसाद—हां हां तुम से कहां तक बकें ?

मोदी—(मुदियाइन के प्रति) वह लोग कौन थे, तेरे भाई बाप या मेरे साले सुसरे कि दुकान का काम धन्धा छोड़ कर दो अच्छे गाहकों को निकाल के, कुलदेवता की भांति उनकी सेवा कर रही थी ? (सोंटे की ओर निहारता है)।

(मोदी, मुदियाइन और काली प्रसाद का प्रस्थान)

बटुकनाथ—ओह! तो दोनो बला टली, जान बची; यहां जरा सो रहूं ।

(काली प्रसाद का प्रवेश)

काली प्रसाद—रात तो बितानी पड़ेगी, इस पागल का गीतही सुनूं, बटुकनाथ! बटुकनाथ! ए बटुकनाथ!

बटुकनाथ—तुमने तो मुझे तंग कर डाला ।

काली प्रसाद—बटुकनाथ उठो, तमाकू पियो; इतना क्यों सोते हो? परदेश में, विशेष कर रस्ते में; इतना सोना तो अच्छा नहीं ।

बटुकनाथ—अच्छा नहीं तो बुराही क्या है? अपने पास कौनसी रोकड़ रक्खी है कि, चोर ले जायगा?

काली प्रसाद—यह नहीं बटुकनाथ, यह नहीं । मैं भी परदेश आया हूं, परन्तु तुमरे में एक गुण है, बेखटके रुजगार कर सकते हो, मुझ में तो कुछ गुण नहीं है, यदि तुम मुझे सरंगी बजाना सिखाओ तो मैं जनम भर के लिये तुमारे हाथ बिक जाऊं ।

बटुकनाथ—अच्छी बात है, अच्छी बात है; हां सिखलाऊं, इसकी चिंता क्या है, क्या आजही शुरू करोगे?

काली प्रसाद—शुभस्य शीघ्रम्, जो सीखना उचित है, उसे अभीही आरम्भ करना अच्छा है ।

वटुकनाथ—मैं जैसा गाता बजाता हूं, वह तुम पहले जी लगा के सुनो, पीछे तुम सीख सकोगे । (सरंगी बजाता है)

काली प्रसाद—अभी रहने दो, रसोई तयार है, चलो खालो ।

वटुकनाथ—मैं कुछ नहीं खाऊंगा, मेरे पास पैसा कौड़ी नहीं है ।

काली प्रसाद—तुमरे गुण का कोई गांहक नहीं होता देख, मैंनेही तुमरे लिये खिचड़ी बनाली है । (चलो चलो)

(दोनों का प्रस्थान)

तृतीय अङ्क ।

तृतीय गर्भांक ।

सरस्वती की कोठड़ी का सामना ।

(सरस्वती, दया, मोहन, लवड़घूं, दुर्गा प्रसाद, और लक्ष्मी।)

सरस्वती—वह तो गये, क्यों जाने दिया ? वह कितनी दूर पहुंचे होंगे, वह परदेश गये हैं, यह तो

मेरे जी में नहीं जचती, यही जान पड़ता है कि, इस महल्लेही में कहीं हैं। न जाने वह अब कितनी दूर गये और कहां पहुंचे हैं। अकेले गये हैं, साथ में कोई संगी नहीं है, हाथ में ऐसा कुछ पैसा भी नहीं है। सब समेत पांचही रुपया ले गये हैं। उससे कितने दिन काम चलेगा ? जो काम धन्धे की ढूंढ में देर हो तो वह क्या खायंगे, इस बात के याद करने से जी उमड़ आता है। हे ! भगवान ! हम दुखिया के दुख का किनारा कितनी दूर है ? अब सोच नहीं सकती। मैं बिचारती हूं कि, अब सोच नहीं करूंगी, पर सोच तो मेरा पीछा नहीं छोड़ता। क्यों उनको जाने दिया, घर में रह कर जो फाका भी करते तो इस दुख से वह अच्छा था। मैं बड़ी मतलवी हूं, वे मेरे लिये दुख भोगें, यह भी मुझे अचछा जान पड़ता है। वह जो भूखे रहते तो मैं कभी नहीं सह सकती। उनकी पुरानी बात एक एक कर याद आती है। उनोने कब मुझे बहुत चाहने की बात कही थी, वह मुझे याद है। उनको कितनी बार पीड़ा हुई थी, मैं उनके सिर के पास बैठी रहती थी, परदेश में जो उनको कहीं

ऐसा हो तो कौन सेवा करेगा? यह एक बार भी मैं ने नहीं विचारा। उनको जाने न देती, पर फिर यह जी में आया कि यहां रहनेही में क्या सुख है ? वह गये हैं, अच्छाही हुआ है। मैं जो भूखी मरूं, वह भी अच्छा, उनको वहां कुछ खाने को तो मिलेगा। सुख हो या दुख हो, उनकी जान तो बचेगी, मुझे कुछ दुख नहीं है, मोहन की फिकिर है। वेवेजी की दासी बन कर रहने पर भी जो वो मुंह न फुलातीं, टुकड़ा देतीं, तो मैं दासी भी बनती; पर अब उपाव नहीं है।

(दया का प्रवेश)

दया—अजी ए! छोटी वहू! क्या और किसी के घरवाला नहीं है या और कोई कभी परदेश नहीं जाता? खाली बैठी २ घूंघट में रोती रहोगी, क्या और कुछ काम नहीं है ?

सरस्वती—क्या कहती है ?

दया—क्या कहूं, आज क्या घरकी रोटी पूरी नहीं होगी या तुम को भूख नहीं है ?

सरस्वती—अब मुझे पत्थर का हिया करना होगा, पूरी गृहस्थ बनना पड़ेगा, सब कुछ करना होगा। पर

दया आज मुझे सचमुच भूख नहीं है। तुम जाके बनाओ खाओ, आज मैं कुछ न खाऊंगी।

दया—मेरे बनाने खाने से तो मोहन का पेट नहीं भरेगा, वह अभी पाठशाला से आके क्या खायगा?

सरस्वती—वही तो इतना दिन चढ़ आया है?

दया—क्यों बेर भयी, क्या सूरज भगवान तुमरे लिये बैठ रहते? वह देखो मोहन आ पहुंचा।

(मोहन का प्रवेश)

सरस्वती—क्यों बच्चा मोहन रोते क्यों हो?

मोहन—मुझे गुरुजी ने मारा है।

सरस्वती—क्यों बेटा आज क्या पाठ नहीं घोखा था?

मोहन—नहीं मा, गुरुजी ने महीने के लिये मारा है।

दया—अरे मर सत्यानासी डोकरा! महीने के लिये लड़के को क्यों मारा? महीना नहीं मिला तो मा बाप को कहला भेजना। अच्छा मैं जाती हूं, महीना दे आती हूं; और दो चार बात ऐसी सुना आती हूं कि उसके बाबा ने भी नहीं सुनी होगी।

(प्रस्थान)

सरस्वती—आओ बेटा गोद में बैठो।

(दया का प्रवेश)

दया—छोटी ठकुराइन मेरे से चलाकी की है ?

सरस्वती—क्या है दया ?

दया—जानो कुछ जानतीं नहीं !

सरस्वती—क्या हुआ दया, ? सचमुच मैं कुछ नहीं जानती ।

दया—तुमने तो रुपये कहीं नहीं छिपाये हैं ?

सरस्वती—मैं तो दो दिन से तेरे संदूख के पास खड़ी भी नहीं हुई ।

दया—तो ठीक २ किसी ने रुपये चुराये हैं ।

सरस्वती—दया अब क्या उपाव होगा ?

दया—यह और किसी का काम नहीं है, तुमारी जिठानी के दुलरुए लवड़ू का काम है । इतने दिनों तक नहीं; परसों वह अचानचक सिकरौल क्यों गया था, ? वहां तो घर में उसकी मा ताले लगा आयी है । जाने का क्या काम था ? जरूर रुपये चुराकर रखने गया था, अब मुझे याद आया कि वह लोग मिलकर उस दिन कानाफूसी कर रहे थे । वह मुंह झौंसा कह रहा था कि, मैं बदन में तेल मल के जाऊंगा। मैंने अच्छी

तरह सुना है कि, मैं जब उनके दालान की ओर गयी तो चिल्ला के बातें करने लगे, मैं कोतवाली जाती हूं, देखूं वह मुंहकाला नकटा बाम्हन कैसे मेरे रुपये हजम करेगा ?

सरस्वती—दया चुपकर, कहीं बात झूठी निकली तो बड़ी विपद होगी। दया चुप कर, तू जरा धीरे बात कर।

दया—क्यों धीरे बोलूंगी क्यों ? बड़ा डर पड़ा है, मेरी चीज चुरायी, मैंही धीरे बोलूंगी, चुप कर रहूंगी ?

सरस्वती—दया ! तू इतनी चिल्लाती क्यों है ? तू जरा धीरे नहीं बोल सकती ?

दया—और कितना धीरे बोलूंगी, इससे भी धीरे कैसे बात करूं ? मैं ने सब कुछ जान लिया है, यह सब करम लत्तड़ू कनकटे के हैं, उस दिन एकाएक घर गया, किसी को जान नहीं पड़ा जानो। अब मैं कहती हूं, भला चाहो तो रुपये मेरे दे दो, नहीं तो मैं कोतवाली में खबर दूंगी। मैं किसी को छोड़ूंगी नहीं। छोटे बड़े सभों को समेटूंगी, सभों को बंधवाऊंगी।

(लवड़धूं का प्रवेश)

लवड़घूं—टू ट्या बटबट टड़ ड़ही है? अडड़ फेड़ टू चोड़ टहेंडी टो मैं टुझे टोटवाली में लेजाऊंडा ।

दया—तू क्या मुझे कोतवाली में ले जायगा, उस दिन तो कोतवाली में गया था ना, क्या कर आया ?

लवड़घूं—टुझे टिसने ट्या टहा? मेड़ी डाड़ोडाने टिटनी ठाटिर टी, टमाटू पिलाया; टुड़सी पड़ बैठाया।

दया—क्योंरे निखट्टू निपूते ! हथकड़ी किसको पहनायी गयी थी ? तीन हाथ तक किसने नाक रगड़ा था ? थूक के किसने चाटा था ? जाती हूं मैं कोतवाली में; मैं किसीका कहना न मानूंगी। घर में पुलिस बुला के खाना तलासी कराके पीछा छोड़ूंगी ।

(दुर्गा प्रसाद का प्रवेश)

दुर्गा प्रसाद—आज फिर क्या हुआ, क्यों रे दया ! क्या हुआ है ?

दया—तुमरे लवडू ने मेरे रुपये चुरा लिये हैं। भला चाहो तो अभी दे दे नहीं तो मैं पुलिस बुलाती हूं।

दुर्गा प्रसाद—दया, तुझे पुलिस नहीं बुलाना होगा, किसने रुपये लिये हैं, इसकी खोज जांच मैं अभी करता हूं । लवड़घूं ! रुपये किसने लिये ?

लवड़धूं—मैं ट्या जानूं, टौन उसटो डवाही है ?

दया—चोर लोग चार भले आदमी को गवाही खड़ा करके चोरी करते होंगे ?

लवड़धूं—मैं ने लिया है, टूने डेठा है ?

दुर्गा प्रसाद—नहीं लिया मैं जानता हूं, तुम साहुकार हो, अब वतला रुपये हैं या उड़ गये ?

लवड़धूं—वहन, वहन, जोजी, डेठो, जीजा ने मुझे चोड़ टहा, वहनोई वाबू, टुमने अपने ढड़ में पाटे मुझे चोड़ टहा, मेड़ी मा मुझे ढड़म पुट्टड़ जुढ़िष्टिड़ टहटो है; टुमने चोड़ ठहड़ाया, यह डुठ मेड़ा जनम भड़ नहीं मिटेडा।

(लक्ष्मी का प्रवेश)

लक्ष्मी—मैं ने सुना है, मैं ने सुना है। मेरे भाई को तुमने चोर कहा है, उसे चोर कहना और मुझे कहना एकही बात है; वह क्या तुमारे घर चोरी करने आया है ?

लवड़धूं—जीजी, टुमड़े ढड़ आटड़ मैं चोड़ वना, मैं ट्या टडूं ? हड़ें ठाटे जान डूंडा।

लक्ष्मी—लवड़ू भैया ! इतनी बेइज्जती भी तेरे भाग में थी; अरे भैया क्या करूं, इससे तो मैं अफीम

खाके प्रान तज दूं । मरकर परेतनी बनूं वह भी अच्छा ।

लवड़धूं—जीजी, टेड़े पेड़ पड़टा हूं, जो जो टू पड़टनो मट होइयो ड़ाम, ड़ाम, ड़ाम ।

(लवड़धूं और लक्ष्मी का प्रस्थान)

दया—बड़े बाबू मेरे रुपयों का क्या होगा ?

दुर्गा प्रसाद—दया, तुमारे किसने लिये, यह तो मैं भली भांति समझ गया । मुझेही दंड भरना पड़ेगा । क्या किया जाय ? जाओ सांझ को लेजाना ।

दया—मोहन के गुरुजी को आज महीना देना होगा, आज गुरुजी ने बच्चे को मारा है ।

दुर्गा प्रसाद—अभी एक रुपया लो, महीने के लिये; सांझ को सब दे दूंगा ।

दया—तो आप देंगे ?

दुर्गा प्रसाद—लाचार देनाही होगा । (स्वगत) "गले पड़े बजाये सिद्धि" ।

(दया का प्रस्थान)

दुर्गा प्रसाद—अलग होकर कैसा कुछ शारीरिक और मानसिक सुख मिल रहा है, यह मैंही जानता हूं । इन थोड़े से दिनों में ऐसा नाकों दम आ गया है कि, जनम

भर ऐसा नहीं हुआ था। काली को जुदा करके क्याही आराम और किफायत हुई है। स्नेहास्पद पुत्र तुल्य निज कनिष्ठ सहोदर देश त्यागी हो गया ! साला हुए घर के मालिक। किसी ने सच कहा है कि, "दिवाल को खाय आला, घर को खाय साला"। सरला बाला कन्या तुल्या, सुबुद्धि दासी भ्रातृ वधु, साक्षात सरस्वती का अवतार छोटी भौजाई; जुदाही पड़ी सीमातिरिक्त कष्ट भोग रही है, सास प्रधान मन्त्री बनी है। अधम बुद्धि, नीच प्रकृति, निज स्त्री अब मेरे गृहस्थी की सर्व मयी स्वामिन बनी है। मैं अब एक सामान्य नौकर से भी अधम, जोरूका गुलाम हो रहा हूं। वाहरे कर्म भाग, वाहरे भाग्य का लिखा ! न जाने भाग्य में और कितनी दुर्गति संघटन होनी लिखी है।

(लवड़धूं का प्रवेश)

लवड़धूं—जीजाजी ! जीजाजी ! ए ! बहनोई बाबू ! इढड़ ट्या ठड़े सोच ड़हे हो ? उढड़ बहन टो भूट चिमड़ा है। जीजी, पड़ो पड़ो फों फों टड़ ड़ही है। ड़ाम, ड़ाम, ड़ाम, मैं भाड़ूं बाबा, टहीं मड़े टो भी नहीं चिमड़े। अड़े बाबा, अड़े बाबा, बड़ा भाड़ी भूट।

(लवङ्‌घ्यूं का प्रस्थान)

दुर्गा प्रसाद—क्या, क्या, लच्मी को मूर्छा हुई, बेहोश पड़ी है ? लच्मी, लच्मी, (सवेग प्रस्थान)

तृतीय अङ्क ।

चतुर्थ गर्भांक ।

मथुरा, विश्रान्त घाट का मार्ग ।

वटुकनाथ, भिखमंगे, पथिक (साहुकार, काली प्रसाद, चौवे)

वटुकनाथ—अरे भाई अब मेरे पास पैसा कौड़ी कुछ नहीं है । क्यों मुझे तंग करते हो ?

१ मंगता—इस तीरथ वासी को एक पैसा दो, धन जन से फरो फूलोगे, जमना मैया तुमरी बढ़ ी करेंगी।

२ मंगता—इस गरीव ब्राह्मण को एक पैसा देजा वावा ।

वटुकनाथ—अरे भाई तुम लोगों के पैरों पड़ता हूं, मुझे जाने दो । छोड़ा, मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं है ।

१ मंगता—तुमरी वगल में पैसों की थैली दबी है, देओना ।

वटुकनाथ—दो, दो, जितनी रज है, मेरे मुंह में भर दो, गले में माला लाद दो, एक आंख तो फोड़दी, दूसरी भी फोड़दो।

२ मंगता—देखो इस धाम में जो कुछ गांठि पल्ले हो दोनों हाथों से लुटादो।

चनेवाला—अरे भैया! इन बंदरन कोऊ एक पैसा के चना डरायदेउ, अखै पुन्य होइगो।

३ मंगता—इहां एक गुना देवेने हजार गुनो पावे है।

१ चौबे—जिजमान तुमारो घर कहां हैं? कहां के रहने हारे हो? देखि जिजमान लुढ़क, पुढ़क, धूमधाम; साढ़े तीन भाई; हमें न भूलियों! दिल्लीवारे सबपे हमारे जिजमान हैं।

वटुकनाथ—हमारा घर कानपुर है, हम खत्री हैं।

२ चौबे—हां हां, कानपुरिये सब खत्री हमारे जिजमान हैं, हमारो नाम धू ी चौबे है। बाप को नाम दुर्लभ चौबे, यह देखि हमारी मोटी बही, यामें तुमारे सब पुरिखान को खातो है, र बके नाम और दसखत हैं।

१ मंगता—जो बन परे, या पुन्न धाम में दोऊ हाथन लुटाय देउ।

वटुकनाथ—अरे यह क्या किया सत्यानासियों ! अरे सालो हमारी सर्वस्वधन सरंगी तोड़ दी, अब क्या होगा ?

१ मंगता—जा तेरो कभी भलो न होइगो ।

(चौवे, मंगता, भिखारी का प्रस्थान)

वटुकनाथ—अब क्या होगा ? यें ! मेरे दादा जी कहां गये ? अच्छा दादाजी को तो खोज लूंगा । अभी तो सरंगी गयी । हाय ! हाय ! मेरा सत्यानास हो गया । रे बाबा मेरी सरंगी भी गयी और मैं भी खो गया । वही तो अब कहां जाऊं, किसे पूछूं, मैं किधर से आया किधर से जाऊंगा ? हाय ! मैं क्यों मथुरा में आया था ? अंत को मेरी यह दशा हुई, अरे सरंगी तू कहां गयी बाबा !

(एक साहुकार का प्रवेश)

साहुकार—तुम कौन हो भाई ?

वटुकनाथ—मैं वटुकनाथ ।

साहुकार—यहां बैठे रोते क्यों हो ? तुमे क्या हुआ है ?

वटुकनाथ—अरे इन मंगतों ने मेरा सत्यानास कर डाला है, मैं खोगया हूं ।

साहुकार—तुम खो क्योंकर गये, तुम क्या कभी यहां नहीं आये थे ?

वटुकनाथ—नहीं मैं दादा जी के साथ पहले ही यहां द्वारकाधीश के दर्शन और विश्रान्त घाट पर जमना के स्नान को आया था । इन मंगतों ने हम दोनों को घनचक्कर बना लिया, दादाजी भी कहीं गये और मैं भी खो गया ।

साहुकार—अच्छा खो गये तो कुछ चिन्ता नहीं; मैं तुमरे दादा जी को खोज दूंगा । अब तुम मेरे साथ चलो, डरो मत ।

वटुकनाथ—तुम खोज दोगे, खोज दोगे ? दादाजी को; अच्छा तो चलो ।

साहुकार—क्या बटोर रहे हो ?

वटुकनाथ—यह हमारी सरंगी के टुकड़े हैं, मंगतों ने तोड़ गिरायी है ।

साहुकार—उस में अब क्या धरा है ? तुम क्या सारंगी अच्छी बजा सकते हो ?

वटुकनाथ—अजी ऐसी बढिया बजाता हूं, कि क्या कहूं ? देखोगे ! देखोगे ! अरे जा तेरा बुरा हो। हमारा

सत्यानाश कर दिया है, अरे सरंगी रे ! तेरे गुन को कैसे भूलूंगा ? तू तो मेरी दुख की साथी थी। तू सरंगी मेरी सदा की संगी थी ।

साहुकार—उसके लिये रोने से क्या होगा ? चलो चलो, मैं तुमको एक नयी सरंगी खरीद दूगा ।

वटुकनाथ—खरीद तो दोगे, पर ऐसी नहीं मिलेगी; यह मेरे गान के साथ ताल २ में आपही आप बजती थी।

साहुकार—तुम मेरे साथ दुकान पर जा कर अपनी पसंद से खरीद लेना ।

वटुकनाथ—अच्छा अच्छा ! तो चलूं ? मैं तुमको नित नये गीत सुनाऊंगा ।

(दोनों का प्रस्थान)

(काली प्रसाद का प्रवेश)

कालीप्रसाद—मैं पहले क्या था, अब क्या हो गया ? शरीर में बल नहीं है। जहां कहीं बैठता हूं, वहां हो का हो रहता हूं । वहीं पड़ रहने की इच्छा होती है। चित्त में उत्साह नहीं, प्राण में आनन्द नहीं है। कपड़ों की दशा देख, कोई ब्राह्मण जान कर विश्वास नहीं कर सकता । घर का समाचार भी कुछ जान

नहीं पड़ा। चिट्ठी लिखता हूं, उसका उत्तर भी नहीं आता। रस्ते से एक संगी जुटा था, न जाने वह भी कहां बहक गया? मेरा अदृष्ट ही ऐसा है कि, जिस के साथ मेरा सम्पर्क होगा, वह सुखी न होगा। सरस्वती! यदि मुझ दुर्भाग्य की गृहिणी न होती, तो उसे और कोई सुख होता या न होता, पर भूखी तो न कष्ट पाती।

(चौबे का प्रवेश)

चौबेजी—क्यों जी पागल होने का ढंग बांध रहे हो क्या?

कालीप्रसाद—हैं! क्या कहा?

चौबेजी—ऐसा कुछ नहीं, रास देखने चलोगे, आज एक अच्छे रासधारी की रास होयगी चलोना चलें।

कालीप्रसाद—तो चलो।

चौबेजी—तुमने कहा था कि रासधारी की जमात में नौकरी करेंगे। सो नौकरी तैयार है, करोगे?

कालीप्रसाद—कहां, कहां?

चौबेजी—हम लोग जहां रास देखने जाते हैं, वहां ही है। मुझ से जमात के बड़े भक्त की मुलाकात भयी

थी, उसका घर हमारे पड़ोस में है, उनका एक पखा-वजिया है, वह अच्छा नहीं वजा सकता, उस पर सदा भंग में गड़गाप रहता है। नयी जमात है। एक अच्छो पखावजिया न होगा तो नामवरी न होगी, इसी से उन ने मुझ से कहा था कि, तुम्हारा कोई परिचित पखा-वजिया हो तो साथ लेते आना। परन्तु एक वन्दोवस्त करनो होगो, वह अभी महीना नहीं दे सकेंगे, आम-दनी में से हिस्सा पत्ती देवो चाहता है। यह तुम्हें स्वीकार हो तो अभी काम लगा दे सकता हूं।

कालीप्रसाद—जो कुछ हो करना होगा, "गरज वाव-ली"। महीना और हिस्सा, चाहे जो हो करूंगा।

चौबेजी—तो चलो।

कालीप्रसाद—हे द्वारका धीश! हे कृष्णचन्द्र महा-राज! इस दुर्भाग्य पर कृपा कीजिये। तुम तो सभी जानते हो। अन्नाभाव से स्त्री पुत्र विपन्न हैं, आशा से निराश न होऊं! तो चलो।)

चौबेजी—तो चलो—

—

चतुर्थ अङ्क

प्रथम गर्भांक।

मथुरा जी, होली दरवाजा।

(कालीप्रसाद, बटुकनाथ, लड़के।)

कालीप्रसाद—आज मेरे क्याही सुख का दिन है। आज मैं ने स्वकृत उपार्जन से निज स्त्री पुत्र के भोजन के लिये यह पहलो पहल रुपये भेजे। घरवाली रुपये और चिट्ठी पाकर न जाने कितनी सुखी होगी। परन्तु वह तो लिखना पढ़ना नहीं जानती। तो पत्र का उत्तर कौन देगा? इतने दिनों में मोहन ने लिखना पढ़ना सीखा होगा। मोहन ही मेरी चिट्ठी का जवाब देगा। अब कितने दिनों से अपनी रानी का वह चन्द्र मुख देख नहीं पाया है। वह मेरी आशा बाट जोह रही है। मैं भी उसकी आशा में प्राण धारण किये हुआ हूं! जगदीश्वर तुमही धन्य हो। तुमरी अपार माया बूझना कठिन है। मैं क्या था, क्या हो गया? संसार की कुछ चिन्ता भी नहीं थी। किसी प्रकार का बोझ भार सिर पर नहीं था। ज्येष्ठ सहोदर के अपार अपत्य स्नेह से प्रतिपालित होता रहा।

सुख से रहता था । उसके वादही न जाने ग्रह-चक्र ने ऐसा पलटा खाया कि, पितृ तुल्य सहोदर विमुख हो गये । घर द्वार लाचार हो कर त्यागना पड़ा । ऐसी दुरवस्था हो गयी कि, जो कभी स्वप्न में भी नहीं सोची थी । अनाहार अनिद्रा से प्राण निकलने को उद्यत हो गये । उपवास करके भी कई दिन विताने पड़े, लंघन फाके की भी त्रुटि नहीं रही । पूर्व-संचित किसी पुण्य-वल से दया सी दाई मिल गयी । इसी से इस वार स्त्री पुत्र सहित प्राण दान पा गया । दया का हृदय वास्तव में दया भरा और परम पवित्र है। इष्ट, मित्र, वन्धु, वान्धव, जो न कर सकें, दया ने उससे भी बढ़ कर कर दिखाया है। दया के ऋण से क्या इस जन्म में उऋण हो सकता हूं ? रानी, तुमरी बातें स्मरण आने से हृदय विदीर्ण होने लगता है। हे भग-वान ! कितने दिनों में उसे पुनः देख पाऊंगा ? मोहन के लिये इतनी चिन्ता नहीं करता, दया-मयी दया और धरवाली के आछत मेरे मोहना को कष्ट न होगा । रानी, तेरी आशा ही में प्राण धारण किये हुआ हूं । आशा की क्या ही मोहिनी शक्ति है। आशाही से आश्वा-

सित होकर जीवन धारण किये हुआ हूं । नहीं तो अब तक इस दारुण दुःख के आवर्त्त में पड़ कर कब के प्राण निकल गये होते । केवल आशा से आशान्वित हो प्राण धारण कर जीवित हूं । आशा ! तेरी छलना को धन्य है । तू क्या नहीं कर सकती ? तू मुमूर्षु को बलवान कर सकती है । तू असंभव को संभव कर सकती है । तेरे से कुछ असंभव नहीं है । सभी संभव है । पर तुझ सरीखी मायाविनी भी कोई नहीं है, जिस से तू ने बार बार प्रवंचना की है, वह भी तेरे माया-जाल को छिन्न कर के मुक्त होने में समर्थ नहीं होता । देवगण भी तेरे छल बल में आ जाते हैं, तो मैं किस गिनती में हूं ? मैं तो सामान्य ज्ञान हीन मनुष्य हूं; तेरी माया को मैं क्या समझूंगा ?

(काली प्रसाद का प्रस्थान)

(बटुकनाथ और थोड़े से पाठशाला के बालकों का प्रवेश)

१ बालक—हनुमान जी केला खाओगे ? जय जगन्नाथ देखने जाओगे ? हम लोगों के नाना बनोगे ?

२ बालक—बड़े बड़े बंदरों के बड़े बड़े पेट, लंका लांघने में दुम लेते समेट ।

वटुकनाथ—अरे बाबा तुमरे घर भर के पैर पड़ता हूं। मैं हनुमान नहीं हूं, मैं वटुकनाथ हूं।

१ बालक—अरे हनुमान, अरे हनुमान!

२ बालक—अरे बच्चा हनुमान, अरे बच्चा हनुमान।

वटुकनाथ—अरे सालो चुप करो। बड़ी दुर्गत में फसा हूं। क्यों रासधारियों ने मुझे रामलीला में हनुमान बनाया था? क्यों मरने के लिये गया था?

१ बालक—अरे बंदर केला खायगा?

वटुकनाथ—अरे सालों मै हनुमान नहीं हूं। कैसे तुम लोग मुझे हनुमान कहते हो? मेरा क्या मुंह काला है, या मेरे शरीर पर रोयं हैं, या मेरे पीछे दुम है?

२ बालक—अरे बंदर! नाचना, तुझे चार केले देंगे।

वटुकनाथ—अरे तुम लोग मुझे मार डालो, मार-डालो; बखेड़ा मिट जाय।

(काली प्रसाद का प्रवेश)

कालीप्रसाद—कौन है, बटुकनाथ?

बटुकनाथ—अरे कोई शहरी बाबू के नाम से पुकारो तो पुकारो, दादा जी कहो तो कहो तो, मैं वटुकनाथ हूं। मैं हनुमान नहीं हूं। सालों ने मुझे जला खाया।

काली प्रसाद—क्यों लड़को, उसके पीछे पड़े हो? तुम लोगों से बड़ा है। उस से क्या ठट्ठा करना उचित है?

२ बालक—अरे भैया, यह हनुमान का भाई जाम्बुवान आया, भागो भागो।

(बालकों का प्रस्थान)

काली प्रसाद—बटुकनाथ कहां जाते हो?

बटुकनाथ—जिधर पैर बढ़ें।

काली प्रसाद—इसके माने क्या बटुकनाथ?

बटुकनाथ—मुझे इस जीवन से प्रयोजन नहीं। देश में नहीं ठहर सका, परदेश आया; यहां भी सुख नहीं हुआ। अब चला, जिस देश में परिचित पुरुष का मुंह न देख पड़ेगा; उस देश में जाऊंगा।

काली प्रसाद—क्यों बटुकनाथ! बहुत दिनों बाद तुम से भेंट भयी, तुम अभी जाना चाहते हो। तुम कहां रहते हो?

बटुकनाथ—दुखड़ा कहां तक सुनाऊं? इस देश से उस देश, इस गांव से उस गांव; जहां जाऊं; वहीं साले हाथ धोके मेरे पीछे लगे हुए हैं। साले मेरे वहीं

हैं । देख पाओगे तो तुम भी मेरे से ठट्टा करोगे । रास्ते में आते आते थोड़े से लड़के मेरे पीछे पड़ गये; मुझे इसी नाम से पुकारते हैं । मैं राम रास में नहीं जाऊंगा । मुझे वही कहेंगे । दादाजी, अब तुम क्या करते हो ? तुमरे चेहरे पर अब तो रौनक है ।

काली प्रसाद—बटुकनाथ तुम मेरे साथ चलोगे ? मैं अब एक रामधारी की जमात में हूं; तुम भी वहां ही रहना चलो । वहां सवांग नहीं सजना पड़ेगा, अच्छा होगा ।

बटुकनाथ—क्या कहा दादाजी, तुमरी जमात में सवांग नहीं बनना पड़ता ? तो मैं अब इस गंदे अखाड़े में नहीं रहूंगा । उस मुंह काले भगत ने पिछली रात को मुझे वही सजा दिया । तुमरे साथही रहूंगा ।

काली प्रसाद—क्या बनाया था बटुकनाथ ?

बटुकनाथ—अरे वही, रामलीला का वही, मुंह पर मुखोटा और पीछे पोंछ, वही, वही ।

काली प्रसाद—क्या हनुमान ?

बटुकनाथ—लो तुम भी कहने लगे ?

काली प्रसाद—नहीं, नहीं । तुम वहां क्या महीना पाते हो ?

बटुकनाथ—(स्वगत) पाता तो चार रुपये हूं, दो बढ़ा के छ बताऊं। (प्रकाश्य) दादा जी, मैं वहां छ रुपये पाता हूं।

काली प्रसाद—तो तुम अपना कपड़ा लत्ता और बाकी पावना ले आओ, हम लोग भी तुमें छ रुपये देंगे।

बटुकनाथ—(स्वगत) अरे तेरा भला हो, और भी दो बढ़ाके कहता, जो होना था, वह हो गया। (प्रकाश्य) अच्छा दादाजी तुमरे कहने से छ रुपये महीना मिलेगा न? तुम वहां क्या करते हो?

काली प्रसाद—मैं वहां बजाता हूं, सुनो बटुकनाथ, मुझे अब उस जमात का मालिकही समझो। मैं चौथाई का सांझीदार हूं।

बटुकनाथ—क्या कहते हो दादाजी, तुम एक दम ऐसे हो गये हो? इसी से चिकनायी मुंह पर छायी है। वही तो सोचता था, नहीं तो क्या ऐसा हो सकता है?

काली प्रसाद—अच्छा अब चलो, वहां कोई हनुमान न कहेगा।

बटुकनाथ—देखो तुम तो आपही कहते और हंसते हो तो क्या दूसरे कसर करेंगे?

कालीप्रसाद—कहां ? मैंने तो तुझे वह कह कर नहीं पुकारा ।

वटुकनाथ—तो कसम खा के कहो कि, वह बात नहीं कहूंगा ।

कालीप्रसाद—हां शपथ के साथ कहता हूं कि वह बात नहीं कहूंगा ।

वटुकनाथ—यह हुआ, तुमनेही न कहा; सब क्यों छोड़ेंगे ? वे लोग समझेंगे ? नहीं दादाजी पहले जानता तो क्या मैं बनता ?

कालीप्रसाद—तो चलो ।

वटुकनाथ—लो चलो (मृदुस्वर से) "सुनो भरथ टे कान सुजस हनुमान जी"

कालीप्रसाद—वटुकनाथ; अब हमारा दोष नहीं है। तुम यदि आपही स्वीकार करो तो लोगों का अपराध क्या ?

वटुकनाथ—वही तो । कहां, मैंने क्या स्वीकार किया ? तुम फिर वही बात कहते हो । अभी कसम खायी थी ना ?

कालीप्रसाद—वह गीतही तो उत्पात की जड़ है उस गीत का अर्थ जानते हो वटुकनाथ ?

बटुकनाथ—मैं जानूं चाहें न जानूं, तुम से जब पूछूंगा, तव बतलाना ।

काली प्रसाद—बटुकनाथ क्रोध मत करो । यह रामायण प्रसंग में हनुमानजी की बात है ।

बटुकनाथ—हां, इसी से जब मैं वह गीत गाता हूं, तभी साले पीछे पड़ते हैं ? मैं समझता था कि यह रामजी का भजन है । इसी से जी खोल के गाता था ।

काली प्रसाद—अब वह गीत मत गाना; सुनने से सब को हनुमान याद आ जाते हैं ।

बटुकनाथ—आज से त्याग, बन्द; अब कौन साला वह गीत गाता है ? आज से दूसरा गीत गाऊंगा ।

(गीत)

"श्री राधे चन्द्र मुखी तव नाम । तदपि चकोर मुखीसी व्याकुल निरखति शशि घनस्याम ।"

(प्रस्थान)

चतुर्थ अङ्क ।

द्वितीय गर्भाङ्क ।

लवड़धूं का बैठक खाना ।

(लवड़धूं, फिदा महम्मद, वेश्या, चिट्टीरसां)

वेश्या—क्यों वाबू साहब सुस्त क्यों हो ?

लवड़धूं—नहीं टो डाड़ोडा फिडा महम्मड टे आने टी वाट ठी, अभी टट आये नहीं; इसी फिटड़ में हूं । (स्वगत) ये ड़ांड़ टहटी है टि मुग्ग ट्यों हो ? अड़ सुग्ग होने टी टो वाटही है । डाड़ोडा साहब ड़ुपया मांडटे हैं । टहां से डूं ? जोजी टो टटा निटालना नहीं चाहटो । जमाहो टड़टी जाटी है (प्रकाश्य) जब टट वीवी साहब टुम टुछ डाओ ।

वेश्या—जो हुक्म हजूर ।

(गीत)

काहे कूं हुए उदास सैयां गबरू ।
तुमरी खुशी से खुशी मोरे लबरू ॥
आंखों में तुमरी सूरत समाई ।
बातों ने दिल को लिया है चुराई । काहे०

लवड़धू—वाह बीवी साहब ट्या वाट है ! वहुट अच्छा इनाम डूंडा । डिल टुस टड़ डिया । लो एट प्याला टो पियो (शराब प्याले में उभाल कर वेश्या को देता है) टलवाड़ साले ने ठड़ाब चीज डेडी, मैंने उमडा व़िलायटी ड़म मांडीठी, साले ने डेसी डेडी ।

वेश्या—ऐसी खराब नहीं है। अच्छी ही है (आधा प्याला पीके बचा हुआ लवडूको देती है) लीजिये आप भी लीजिये।

लवड़धूं—लाइये, डीजिये, यह टो भडवटी टा पड़साड है। (बची हुई जूठी शराब पीता है) बीवी साहब, और एट टोई टान प्याले पड़ उड़ाओ।

वेश्या—सुनिये.......

(गीत)

ठुन ठुन प्याला क्या रंग ब्रेरंग।
अंखियां लाले लाल निशा चलता है झम झम झम॥
ह्विस्की रम पियो हो बेगम।
जरा ना डरो मत करो शरम॥

(दारोगा का प्रवेश)

लवड़धूं—अड़े टौन? फिडा महम्मड! आओ डाष्ट, टुमड़े, आने में डेड़ हुई, टा मैं ढबड़ा डया; मैंने जाना भूल डये।

दारोगा—अरे नहीं दोस्त, हम लोग पुलिस के आदमी हैं। किसी से वादा खिलाफी नहीं करते।

लवड़धूं—आइये बैठिये।

दारोगा—आज तो बड़ी रंगत है, प्याला निवाला भी है, बीबी साहब भी हाजिर हैं; बैठक खाना भी खूब सजा है।

लवड़धूं—डाड़ोडा साहब, डेठिये टो सही, टैसा बैठट ठाना है। टैसा असवाव है। जीजी ने जीजा से टहटे, मेड़ा यह बैठट ठाना जुडा बनवा डिया है। वड़े बैठट ठाने में जीजा जो बैठटे हैं। मैं यहां बैठटा हूं। एट साठ बैठने से मजे में ठलल आटा है।

दारोगा—बेशक, बेशक, उमदा बैठक बनी है। एक साथ बैठने से बीबी साहब के दीदार कहां से होते? बेहतर हुआ।

लवड़धूं—आप लोडों टे आसीड़वांड से।

दारोगा—तो लवडू दोस्त, ऐसे घर में बहन की शादी करके भी ऐश अशरत न उड़ाओ तो बात ही क्या रहती? मगर मेरे आने से गाने बजाने में खलल पड़ा मालूम होता है। वरना मेरे आते ही सब रंगत रुक क्यों गयी?

लवड़धूं—जी नहीं लीजिये, एट प्याला पीजिये, (शराब का प्याला भर कर देता है)

दारोगा—क्या है?

लवड़धूं—शाहजहांपुरी है।

दारोगा—इसे आपही पीजिये। हम लोग पुलिस के आदमी हैं। इस नरम मसाले से क्या होगा? गरम मसाला लिया करते हैं।

लवड़धूं—अच्छा वही मंडाटा हूं।

दारोगा—अब मंगाने की जरूरत नहीं। हां बीवी साहबा, एक दम खामोश क्यों हो गयीं? जरा मजलिस गरम क्यों नहीं करतीं, गुम क्यों हो बैठीं? जरा ताना रीरी की रौनक हो तो क्या हरज है?

वेश्या—जी नहीं, मैं तो गाही रही थी, आप लोगों की आपस में गुफ्तगू होने लगी, इसी से ठहर गयी थी।

लवड़धूं—तो अच्छा बीबो साहब डाड़ोडा साहब टो टुछ सुनाटे ठुस टड़ो।

वेश्या—लीजिये बंदी हाज़िर है.... ....

(गीत)

"चमन में जाके जो हमने देखा,
हर एक बुलबुल चहक रहा था।
इधर भी बेला उधर चमेली,
बीच में तवला ठनक रहा था।
इधर भी जूही उधर मोतिया,
बीच में चंपा चमक रहा था"।

(दूसरा)

मैं तो शहजादे को ढूंढ़न चलियां ।
ढूंढ फिरी सारी गलियां ॥
केस रमाके वेस बनाके अंग भभूत भी मलियां ।
मांस झुलस गयी मुख कुम्हला गया,
जैसे गुलाब की कलियां ॥
नयना पथराये डगर भुलाये,
धूप में बन बन जलियां ॥

दारोगा—सुभान अल्लाह ! बेशक तबियत खुश हो गयी ।

लवड़धूं--बीबी साहब, आज टुम जाओ । टल आना, अभो डाड़ोडा साहब से टुछ बाट टड़ना है ।

वेश्या—जो इरशाद (वेश्या का प्रस्थान)

लवड़धूं—अब टामटी बांट टहूंडा, इसे ड़खडूं (शराब की बोतल और प्याले को छिपाता है)

दारोगा—इसे छिपाते क्यों हो ? क्यों कपड़े से ढप दिया ?

लवड़धूं—नहीं नहीं, ट्या जानटे हो, अब लोडों टे आने टा वठट हुआ । टोई आजाय टो डेठ लेडा,

इससे छिपाना अच्छा है। और आप से टाम टी बाट भी टो टड़नी है। विशेष अमले लोड सब मेड़े पास उम्मेडवाड़ी टड़ने आटे हैं। उन लोडों टे आने टा समय हो डया। मैं जीजो टा भाई हूं टिं नहीं, इससे मेड़े से सब जड़ा डड़टे हैं। मेड़ो इज्जट भी टड़टे हैं। एट प्याला टो मेड़े टहने से झटपट पीलो।

दारोगा—अच्छा एक गिलास एक दमही पीलूंगा।
(लवडू का मद्य ढाल कर देना और दारोगा साहब का पीकर मुंह बिचकाना)

लवड़धूं—टो अब टाम टी बाट टड़ो।

दारोगा—काम की बात तो जो मैं पेश्तर कह चुका हूं। वही हम लोग पुलिस के आदमी हैं। जियादा बातें नहीं करते।

लवड़धूं—डेठो टो भाई, टुमाड़ा टिटना अन्याय है। मैंने सब टुछ टिया, साड़ी भोंटी मेड़े सिड़, टुम बैठे बैठाये इटना मांडोडे टो टैसे टाम सढेडा?

दारोगा—मैंने मांगाही क्या है? आज कल उन लोगों की जैसी खराब हालत हो गयी है। अगर मैं कहदूं, तो वे लोग खुदही मुझे तीन हिस्सा देदें।

(डांकिये का प्रवेश)

डांकिया—वावू आपकी एक चिट्ठी आयी है ।

लवड़धूं—टहां है डो (लेके पढ़ता और भयभीत होकर) वावा ड़े !

डांकिया—क्यों वावू ऐसे क्यों किया, क्या चिट्ठी में कोई वुरी खवर है ? वावूजी आप जिनकी चिट्ठी लेते हो वह आपके कौन हैं ?

लवड़धूं—वह हमाड़े बाप हैं । मैं उनटा लड़टा हूं, मेड़ा नाम मोहन लाल है ।

डांकिया—वावू मुझे दशहरे की त्योहारी और वकसीस नहीं मिली ।

लवड़धूं—अच्छा, अच्छा, आज जाओ, फिड़ टिसी डिन ले जाना ।

(डांकिये का प्रस्थान)

दारोगा—क्यों खत में क्या लिखा है, कि तुम घवरा गये ? होश हवाश उड़ गयी, चेहरा जर्द हो गया । मुंह पर पसीना आ गया ?

लवड़धूं—अड़े भाई, अव बड़ी मुश्किल हुई । मेड़े वनावटी वाप जल्डी ढर आवेंडे, चिट्ठी में लिठा है ।

दारोगा—खैर अब क्या कहते हो ?

लवड़घूं—डेठो टो भाई मुझे टिटना टष्ट है, टिटना झूठ टहटे, वाप बनाटे, जाल टड़टे, डुपये इटट्ठे टिये, टुम टीन हिस्सा मांडटे हो। मेड़े वाष्टे टिटना अन्याय होड़ा।

दारोगा—तुमने जाल किया, झूठ बोला; यह सब सही है। मगर तुम को यह हिक्मत किसने बतलायी ? किसने सिखलाया ? अगर मैं ऐसी सलाह न देता तो तुमारे हाथ एक पैसा भी न आता।

लवड़घूं—टुमने टो सलाह नहीं डी। जीजी ने पड़ामड़स डीठी। मैं टुमटो अपनी वेवटूफी टे टाड़न ड़ेटा हूं। टुमें न बटलाटा टो टुम टैसे जानटे ?

दारोगा—मुझ से न कहने तो आज तक तुम को पुलिस पकड़ के ठिकाने पहुंचा देती। मैं ने ही तुम को कहा कि, मनी आर्डर पर अपना नाम दस्तखत न करके मोहन लाल का नाम सही किया करो। ऐसा करने से कुछ गड़बड़ न होगा। क्यों यह बात मैं ने कही थी ?

लवड़घूं—हां, यह टुमने बटलाया ठा सही; टिंटू डेठो टो टुमड़ा डावा टिटना अनुचिट है ? अब छ सौ

डुपया टुम टो डेने से, मेड़े पास ट्या ड़ह जायडा ? फिड़ उसमें से चीजी टो भी डेना होडा ।

दारोगा—मैं एक कौड़ी भी नहीं चाहता, जिसके रुपये हैं, उसीको सब मिल जायं, यही मेरी मन्सा है। चाहिये जो कुछ मेरे पास हैं और जो कुछ तुमरे पास हैं, वह सब मोहन लाल की मा को दे आवें। मैं उन रुपयों की परवाह नहीं करता, चाहता भी नहीं; आपकी मरजी हो तो सब लीजिये । मैं जो कुछ जानता हूं, मुनासिब काररवाई करूंगा अब (गमनोद्यत)

लवड़धूं—फिडामहम्मड चले ट्या ? मैं ने टो भाई चटटने टी टोई वाट भी नहीं टही । अच्छा, जिसटे डुपये हैं, उसी टो डिये जायंडे । अभी टुम वैठो, बोटल टो ठाली टरना होडा ।

दारोगा—देखो लवड़ू, मुझे दो सै रुपये सीधी तरहं दे दो, नहीं तो मैं सारी हकीकत खोल दूंगा ।

लवड़धूं—टुमें डोसै डुपये डूंडा ट्यों ? टुम ट्या उस टाम में नहीं हो ? टुमें जो विपड है, मुझे भी वही विपड है ।

दारोगा—मैंने क्या रुपये लिये हैं कि, मुझे आफत है ?

लवड़धूं—डोष्ट फिड़ा महम्मड टुमने ढैसे टहा टि टुम ने डुपये नहीं लिये ?

दारोगा—मैं ने रुपये लिये हैं, किसी ने देखा है ?

लबड़धूं—वाह, वाह, डाड़ोडा साहब ! एट डम निटल डये ? सो मैं ने डेठा है।

दारोगा—तुम तो असामी हो, तुम तो सब को लपेटोगे, तुमरी बात का कौन यकीन मानेगा ?

लबड़धूं—डाड़ोडा साहब, जड़ा औड़ बैठिये, थोड़ा और पीजिये।

दारोगा—आज मेरी तबियत कुछ अलील है, उस पर मुझे कुछ खास काम है। जियादा पिऊंगा तो मुतलक काम नहीं कर सकूंगा, अब काम की वात करो वरना फिजूल बैठे रहना....

लवड़धूं—(दारोगा के पैर पकड़कर) भाई फिडा महम्मड, हमाड़ो टुमाड़ी बहुत डिनों टी डोष्टी है, इस विपड से जैसे बने बचाओ। टुमें डोसै डुपये डेने होंडे टो मै नहीं बचूंडा। यदि मेड़े हाठ में डुपये होटे टो टुम जो मांडटे वही डेटा, पड़ंटू अब टो मेड़े पास फूटी ढौड़ी भी नहीं है।

दारोगा—छी, छी, अगर आप ऐसा करेंगे तो मैं अभी सब राज फास कर दूंगा । खामोश बैठकर काम की बात करो । हम लोग पुलिस के आदमी हैं । कितने साले हम लोगों के पैर पड़ा करते हैं। तुमरे पैर पड़ने से रुपये की बात रफा नहीं हो सकती ।

लवड़धूं—डाड़ोडा साहब, टुमड़े शड़ीड़ में ट्या डया माया नहीं है ? मेड़ा ढन प्ड़ान सभी टुमड़े हाट है, टुम यडि मेड़ी इच्छा न टड़ोडे टो टैसे बचूंडा ?

दारोगा—तुमारी जान और दौलत सब तुमारे ही हाथ है । अगर बचने की कोशिश नहीं करोगे तो मैं क्या करूंगा और कैसे बचाऊंगा ?

लवड़धूं—भाई डाड़ोडा साहब, टाटे पड़ नोन नहीं छिड़टो । टो त्या टहटे हो ?

दारोगा—नगद चेहरेशाही कंपनी सिक्का, तुमरी दोस्ती की खातिर····सौ रुपये ।

लवड़धूं—टो मुझे टाट डालिये, माड़ डालिये ।

दारोगा—क्यों भाई मै क्यों काटूंगा ? जिनो ने काटना है, वही काटेंगे ।

लवड़धूं—ड़ाड़ोडा साहव, जड़ा बैठो, मैं जीजी के पास से आटा हूं। डेठो चले मत जाना (प्रस्थान)

दारोगा—भंग का पीना सहल है। मगर मौज मारना दुस्वार है। अभी हुआ ही क्या है? पहले जेल-खाने की हवा खाओ, फिर समझो कि, बेईमानी करने का क्या क्या मजा है। बहनोई के सिर पर बाबूगीरी चलती है। तब लंबी धोती, विलायती बूट, कफदार कमीज, टेढी मांग, अतर फुलेल, बीबी दिलजान का गाना, बैठकखाना, सब घुसड़ जायगा।

(लवड़ू का प्रवेश)

दारोगा—खबर क्या है?

लवड़धूं—अड़े भाई टवड़ टया है, मैंने टो टुमटो टभी टहा ठा टि मेड़े हाठ एट टौड़ी भी नहीं है। जीजो टे पास से ड़ुपया निटालना बड़ा सहज टाम नहीं है।

दारोगा—इन बातों को रहने दो, काम की बात करो। मैं अब ठहर नहीं सकता। जानते हो कि हम लोग पुलिस के आदमी हैं। कहीं जियादा ठहरने को वक्त नहीं मिलता। साफ जवाब दो, चला जाऊं। वाहियात वक्त जाया करना गैर मुमकिन है।

लवड़धूं—भाई वड़े ड़ोने भीठने से जीजी डेने में ड़ाजी हुई है। पहले टो बोली टुछ डेंडे नहीं, फिड़ पचास ड़ुपये, फिड़ बहुट टहने सुन्ने से, मेड़ी माटे ड़ोने पीटने से एट से एट ड़ुपये डेने में ड़ाजी हुई है। टुमड़े सौ ड़ुपये औड़ एक ड़ुपया, शाहजहांपुड़ी बोटल टा।

दारोगा—तो रुपया लाओ।

लवड़धूं—आजही।

दारोगा—अभी।

लवड़धूं—यह टो नहीं होडा।

दारोगा—विना हुए चलेगा भी नहीं, तुम से कहने में कोई ऐब नहीं; तुमारी बात गवाही में मानी ही नहीं जा सकती। उस चिट्ठी के सुनने के बाद से मेरा भी कलेजा कांप रहा है। कह नहीं सकता कि फौजदारी मामले का हंगामा कहां से कहां तक पहुंच जाता है। मेरे जी में आता है कि, मैंही सब बातें खोल कर जाहिर कर दूं। तो मैं बच जाऊं। अभी तक सब जाहिर कर देता। मगर तुमारी खातिर से नहीं कहा, और कोई होता तो मैं कसर न करता, तुम से इतनी

मुहब्बत है। तुम से जुदा बात है। अगर इस आफत में और कोई फस जाता तो पांच से से कम में हर्गिज राजी नहीं होता। मगर तुमसे दोस्ती का हक रखने को सौ में राजी हुआ हूं। मगर हां, अगर नगद मिलें तो, क्योंकि, मुंह खाय और आंख शरमाय, तो खूब याद रखना। नगद न मिले तो वड़ा बखेड़ा होगा।

लवड़धूं—अच्छा भाई टुम न छोड़ोडे, फिड़ एट बाड़ जांटा हूं। (प्रस्थान)

दारोगा—अब इस से जो कुछ मिल जाय। वही झटक लेना चाहिये, यही आखिरी है। इसके बाद गुल खिल जायगा। जो मिल जाय वही सही। मोहन का बाप काली बाबू मकान को आता है। फिर सब काम तमाम हो जायगा। खास कर अगर इस केस को मैं पकड़ा दूं तो प्रोमोशन की भी उम्मीद है। यह मामला बड़ा सख्त है। जुआ चोरी, जाल फरेब बहुत से चार्ज हैं। इसको साबूत कर दूंगा तो चाहे तो तरक्की होकर मेरी कलकत्ते के डिटेक्टिव महकमे में भी तबदीली हो सकती है। वही अच्छा है। इस को जाहिर कर देना ही मुनासिब है। जाहिर न कर

देने से ईमान में फरक पड़ेगा । क्योंकि जिसका नमक खाता हूं, उसको नमक हलाली करना फर्ज है । नहीं तो नमक हरामी होगी, इससे तो पहले सौ अदा कर लूं, उस के बाद पुलिस की काररवाई करूंगा । लवड़घूं बाबू, जियादा नहीं ठहर सकता ।

लवड़घूं—(नेपथ्य से) अड़े आटा हूं भाई साहेब, टुम जड़ा इढड़ आओ, चीजी टुमड़े हाठ में आप डूंडी

दारोगा—अच्छा अच्छा (प्रस्थान और दोनों का प्रवेश)।

दारोगा—देखो जब कहीं रस्ते वगैरह में मिलना तो मुझ से ज्यादा बात चीत मत करना । क्योंकि हम लोग पुलिस के आदमी हैं । किसी से ज्यादा बात करना हम लोगों को मुनासिब नहीं । कोतवाली में भी हम से मिलने या बात करने के वास्ते मत आना, समझे ।

लवड़घूं—अच्छा भाई, टुमाडी भलाई से मेरी भी भलाई है ।

(सब का प्रस्थान)

चतुर्थ अङ्क ।

तृतीय गर्भांक।

सरस्वती की कोठरी ।

(सरस्वती और दया)

सरस्वती—दया क्या हुआ ? दिन पर दिन, महीने पर महीने, वर्ष पर वर्ष बीत गये; वे अभी तक क्यों नहीं आये ? उनकी कोई चिट्ठी क्यों नहीं आयी ? उनका कोई समाचार नहीं आया । आज चार बरस, चार जुगे से बिताये, तो भी न तो कोई चिट्ठी आयी, न आपही आये । कहो दया, क्या बात है ? दया, तेरा जी तो दया-मय है, तुझे क्या जान पड़ता है ? वे कब तक आवेंगे ? मैं कब उनके दर्शन पाऊंगी । मेरी आंखे कब पवित्र होंगी ?

दया—देखो छोटी ठकुराइन, घबराने से काम नहीं चलता, मेरा जी कहता है कि छोटे बाबू तुरन्त आवेंगे । नेक ठहरो । वे बिदेश गये हैं । कुछ काम धंधा न लगा होगा, इसी से आज तक चिट्ठी नहीं लिखी । डर क्या है ? हाथ में बिना रुपया आये खाली चिट्ठी कैसे लिखें ? रुपये पैसे का सुबीता नहीं कर सके होंगे, इसी से लाज के मारे चिट्ठी नहीं लिखते ।

सरस्वती—वे समझते होंगे कि, हम लोग भले चंगे सुख में हैं। पर आज चार बरस से पता ठिकाना नहीं है। कोई समाचार नहीं मिलता। मेरा जी कैसा २ करता है। वह भगवानही जानते हैं।

(नेपथ्य में) घर में कौन है जी ?

दया—कौन है ?

(नेपथ्य में) एक दफा इधर आओ, एक खबर है।

सरस्वती—दया, दया ! काहे की खबर, कैसी खबर, कौन आया है ? क्या उनकी कोई खबर आयी है ?

दया—भगवान करें उनकी हो कोई अच्छी खबर आयी हो।

(नेपथ्य में) जरा जल्द आओ।

(दया का प्रस्थान)

सरस्वती—हे दयामय भगवान ! मेरी आशा पूरी करो, उनके आनन्द मंगल का समाचार ही आया हो।

(दया का प्रवेश)

सरस्वती—दया ! दया ! कहो, कहो ? क्या खबर है ? सब कोई राजी खुशी हैं ? कुशल समाचार है ना ?

दया—खबर अच्छी है जो छोटी बहू, खबर अच्छी ही है।

सरस्वती—सच कहो दया, मेरी सौगंध खाकर कहो, झूठ न बोलियो ।

दया—नहीं जी नहीं, छोटी ठकुराइन ! झूठ कह के क्या लाभ ? कोतवाली के दरोगा आये थे, छोटे बाबू अब जल्दी आवेंगे, उनको खबर मिली है । वही कहने आये थे । मोहन को साथ लेके मुझे एक बार कोतवाली जाना होगा ।

सरस्वती—क्यों दया ? मोहन को क्यों कोतवाली जाना होगा, उसने क्या अपराध किया है ?

दया—(कान में कुछ कहने के अनन्तर) हां, हां, बराबर छोटे बाबू चिट्ठी और रुपया भेजते रहे । उस मुंहकाले, टुकड़तोड़, निखसमें, लवड़ू ने मोहन बन के ले लिया और मेरे मोहन का नाम सही करता रहा । मुए ने बहनोई को लूट खाया, हम लोगों का भी सरबनास किया ।

सरस्वती—तो अब क्या होगा ?

दया—तुम पतितपावन दीनानाथ की कोठड़ी में बैठके ध्यान धरो । मैं मोहन को लेके कोतवाली जाऊं ।

(दोनों का प्रस्थान)

चतुर्थ अङ्क ।

चतुर्थ गर्भांक

नये घर का चौक ।

(दुर्गा प्रसाद, लक्ष्मी, गोमती, लड्डूराम, कोतवाल, दारोगा और कानिष्टेवल लोग)

दुर्गा प्रसाद—अब उपाय क्या ? सारे अमले के लोग मेरे पर बिगड़ और चटक गये हैं । चटकने की तो बात ही है । शिव-मंदिर प्रतिष्ठा के समय मैं ने अकेले चार हजार खाया । और सब लोगों को पांच से । इस से चटकें नहीं तो क्या ? करता क्या ? घरवाली ने एक दम अन्न जल त्याग दिया था । उसका कहना मानना पड़ा । उसने कहा कि कलकत्ते के बाबू लोग घरवाली के नाम कंपनी का कागज खरीद देते हैं । तुम भी ले दो । क्या करूं ? लाचार चार हजार का कंपनी का कागज खरीद दिया । परन्तु इतने पर भी उसे संतोष नहीं । इतना करके भी उसे सुखी न कर सका । सुख होगा कहां से ? वह तो सदा शरीर की पीड़ा से असुखी रहती है । अस्तु अब उपाय क्या ? हिसाब किताब समझाने में तो मैं नहीं बचूंगा । जिस दिन से नये

दिवान राम कृष्ण साहब ने मुझ से हिसाब मांगा है। उस दिन से कोई भी कारिन्दा और अमला मेरे मकान पर नहीं आता। उस दिन तो दिवान साहब ने साफही कह दिया कि, नायब-खजांची बाबू का पेट मोटा हो गया है। तोंद बढ़ आयी है। अब थोड़े में पेट नहीं भरता। भीतर भीतर बात इतनी बढ़ गयी है, यह तो मैंने कुछ न जाना। इनही सब कारणों से तो महाराजा साहब ने गवर्मेन्ट से नया दिवान मांगा और मुंशी राम कृष्ण जी आये। ये तो ऐसे वैसे नहीं हैं कि हम लोगों के साथ मिलकर घूंस खालेंगे, ये हैं बड़े खरे, खैरख़्वाह, निमकहलाल; इनके समय में हम लोगों की पुरानी चाल नहीं ठहरेगी। दाल नहीं गलेगी। अब उपाय क्या? मेरे साथही सभोंही ने कुछ कुछ खाया है, पर झोंकी और पूरी जिम्मेवारी मेरी है।

(लक्ष्मी का प्रवेश)

लक्ष्मी—देखो तो, कैसा बाजू गूंथा गया है?

दुर्गा प्रसाद—बहुत अच्छा।

लक्ष्मी—अब की दो बंगला अनंत घड़वा दो, जौशन हुए, बाजू हुए, अब दो अनन्त बनवा दो तो एक बरस की छुट्टी। एक बरस भर में तुम से और कुछ न मागूंगी।

दुर्गा प्रसाद—गहनों की बात क्या कहती है? मेरा तो सत्यानाश हुआ चाहता है।

लक्ष्मी—मेरे देने के नाम से ही तुमारा सत्यानाश होता है। सब में आग लग जाती है। सब जल जाता है। मुझे देनेही में आज यह, कल वह है। आज पीड़ा है, कितना कुछ हो जाता है। जाय सब में आग लग के जल जाय।

(नेपथ्य में) दुर्गा बाबू घर में हैं क्या ?

दुर्गा प्रसाद—कौन है हो ?

(नेपथ्य मे) मैं फिदामहम्मद।

दुर्गा प्रसाद—खड़े रहिये, आता हूं।

(लड्डू का प्रवेश)

लवड्थूं—अड़े बाप, बाबाड़े, मड़ा मड़ा।

दुर्गा प्रसाद—अच्छा एक सांढ़ पाला है (स्वगत)

जिसने पाला साला । उसका भया दिवाला ॥
उसी का मुंह काला । उसी का बुरा हवाला ॥
जो पड़े साले के पाले । वह मरने बिना निवाले ॥

(प्रस्थान)

(गोमती और लक्ष्मी का प्रवेश)

गोमती—क्या हुआ बेटा लवडू ?

लवड़धूं—अड़े अब लवडू, अव लवडू मड़े ।

गोमती—बलाय, बलाय; क्या हुआ, क्या हुआ ?

लवड़धूं—वही इजिप्टड़ी चिट्ठी जीजी, वही मनी-आडड़ ।

(दुर्गा प्रसाद का प्रवेश)

दुर्गा प्रसाद—कहां गया, वह सत्यनाशी ? अब रोती क्यों है ? जैसा काम वैसा फल । तू कहती थी ना कि तेरे मामा के यहां से चिट्ठी, रुपये, लवडू को आते हैं । यह तेरी मामा की चिट्ठी है ? अरे दुर्भागा, आप तो बहा, मेरी भी बदनामी इस समय बढ़ा गया ।

गोमती—देख तो बेटी ! मैं ने तो तभी कहा था कि, लक्ष्मी तू अपने घर हम लोगों को लिये जाती है । पीछे बेइज्जत होके लौटना पड़ेगा । वही मेरी बात आगे आयी । बेटी तू ने कहा था कि, मा, मेरा घर द्वार है, कौन बेइज्जत करेगा ?

लक्ष्मी—उन बातों में क्या धरा पड़ा है ? जो कुछ भाग में होगा, वही होगा ।

दुर्गा प्रसाद—अब भाग दुर्भाग की बात छोड़ो ।

यदि लवड्डू को बचाया चाहो तो, उसे एक साड़ी पहनाओ, कोई पूछे तो अपनी बड़ी बहन बतलाना। मैं ड्योढ़ी पर जाता हूं।

गोमती—चलो बेटी, चलो, लवड्डू को बचाओ, बचाओ।

(सब का प्रस्थान)

(दुर्गा प्रसाद, कोतवाल, दारोगा और कानिष्टबलों का प्रवेश)

कोतवाल—आप के मकान में असामी है। चाहे तो हाजिर कर दीजिये, नहीं तो खाना तलाशी लूंगा।

दुर्गा प्रसाद—आप सोच समझ के बात कीजिये। यह किसी ऐसे वैसे का मकान नहीं है कि, आप अंदर महल की तलाशी लेंगे। यदि असामी न मिला तो क्या होगा?

कोतवाल—अगर न मिले तो कानून की रूह से जो खुशी कीजियेगा। जाओ फिदामहम्मद, सब जगह देख आओ।

(दारोगा का प्रस्थान और पुनः प्रवेश)

दारोगा—कहीं पर भी तो नहीं मिला, जरूर इसी मकान में है। अभी पिछवाड़े के दरवाजे से घुस कर इस

मकान में आया है। अब रसोई घर देखना बाकी है।

कोतवाल—हां मुनासिब है, दुर्गा बाबू हम लोग यहां खड़े हैं। आप औरतों को सामने से निकल जानें को कहिये।

दुर्गा प्रसाद—यह बड़ा अन्याय है, बाहर वालों के सामने औरत बच्चे क्योंकर निकल सकते हैं? यह कभी नहीं हो सकता। और रसोई घर में जानें का अधिकार नहीं है। हिन्दू की रसोयां में कोई नहीं जा सकता, विशेष वहां जनाना है।

कोतवाल—इसके कोई माने नहीं, जहां हम लोगों को शुभा होगी वहां ही की तलासी ली जायगी। चाहे रसोई घर हो, चाहे पूजा घर हो। मुसल्मान को तो नहीं भेजूंगा। हिन्दू कानष्टेबल को भेजता हूं। इस में आप को उज्र क्या है? और कहिये कि औरतें हम लोगों के सामने से कैसे जायंगी। इस में हर्ज क्या है? सब हमारी मा बहन हैं। खास कर घुंघट निकाल कर मोटी चादरें ओढ़ कर।

दुर्गा प्रसाद—कोतवाल साहब! समझ बूझ के हुकम लगाइये, असामी न मिला तो, मैं सहज में न छोड़ूंगा?

कोतवाल—हम लोग निशाना ठीक करके आये हैं। सब बातों का इतमीनान कर लिया है । हमारे ऊपर भी हाकिम हैं। क्या उनका डर हम को नहीं है ?

दुर्गा प्रसाद—तुम लोग एक एक कर दूसरे कमरे में चली जाओ ।

(रसोई घर मे तीन स्त्रियों का निकलना)

कोतवाल—बीच की औरत पर शुभा होती है ।

दारोगा—हां ठीक जनाब, बीच में जो आती हैं, उनको ठहराइये, वह कौन हैं ?

गोमती—वह मेरी बड़ी बेटी लवड़ी है ।

कोतवाल—हरि सिंह, पकड़ो ।

(कानष्टेबल पकड़ लेते हैं)

(लक्ष्मी और गोमती का प्रस्थान)

लवड़धूं—अड़े पटड़ा जीजी, बापड़े बापड़े !

कोतवाल—कहिये दुर्गा प्रसाद बाबू, अब क्या फर्माते हैं ?

दुर्गा प्रसाद—मैं अब क्या कहूंगा ? असामी मिल गया है । ले जाइये ।

दारोगा—क्योंबे खूब चिट्ठियां और मनी आर्डर ठिकार जाता था ?

कोतवाल—हथकड़ी पहनाओ।

(कानष्टेबल हथकड़ी डालता है)

लवड़धूं—डोष्ट फिडामहम्मड, टुम टो मुझे माई डियड़ टहटे पुटाड़टे ठे।

दारोगा—चुप रहो हरामजादा, सुअर का बच्चा; टुकड़गदाई।

को: वाल—हरि सिंह, ले जाओ साले को, कोतवाली की हाजत में।

(सभों का प्रस्थान)

(लक्ष्मी और गोमती का प्रवेश)

लक्ष्मी—अरे लवड़ू, भैयारे तू कहां गया रे?

गोमती—अरे बेटा लवड़धूं राम! अरे मुझ अंधे की लकड़ी तू कहां गया?

(रोते रोते दोनों का प्रस्थान)

पंचम अङ्क।

प्रथम गर्भांक।

मुगल सराय, काशी की सड़क।

(किसानों के लड़के, काली प्रसाद, बटुकनाथ)

किसान बालक गण—

(गीत).

उड़ जारे पखेरू, दिन तो रह गया थोड़ा ।

दाना भी खाले, वारी पानी भी पीले; चिड़िया रैन बसेरा ॥

(बटुकनाथ और कालीप्रसाद का प्रवेश)

बटुकनाथ—दादा जी आज जाके क्या होगा? यहां ही ठहर जाओ । सामने वनिये की दुकान है, वह देखो सराय है । सांझ को रस्ता चलना अच्छा नहीं । रेल सवेरे जायगी । उसी पर चढ़के चलेंगे । मैं तो कभी काशी आया नहीं । तुमरी कृपा से काशी का स्नान विश्वेश्वर के दर्शन हो जायंगे । कलही कानपुर लौटजाऊंगा । तुम कहते हो काशी यहां से तीन कोस है, पैदल जाते भोर हो जायगा । सुना है, काशी के गुंडे सरनाम हैं । रस्ते में लूट पूट लें तो क्या होगा? किस मुंह से और कैसे कानपुर लौटूंगा? घर में क्या मुंह दिखाऊंगा?

काली प्रसाद—क्यों बटुकनाथ, जब हाथरस के रस्ते में मिले थे, मोदी की दुकान में टिके थे, तब तो तुम वेखटके बाहर पेड़ तले घुर्राटे लेते थे। आज डरते क्यों हो?

बटुकनाथ—तब पास फूटी कौड़ी नहीं थी; अब साथ कुछ रकम है।

काली प्रसाद—थोड़ा चल कर, नाव पर चढ़, गंगा पार होनेही से सिद्धेश्वरी महल्ले में पो फटने घर पहुंच जायंगे, तुम समीप ही श्री संकटा देवी के मंदिर में टिक रहना। कल गंगा स्नानादि कर के, प्रसाद पाके कानपुर लौट जाना। क्यों रेल के आसरे रात भर यहां पड़े सड़ें ?

बटुकनाथ—तो यहां नहीं ठहरोगे चलोहीगे ?

कालीप्रसाद—भाई तुम मेरे साथ तीर्थ करने आये हो तुम को कानपुर लौटने में दो एक दिन की देर है। पर मैं घर के पास पहुंच गया हूं। मेरा जी नहीं मानता, चलनाही निश्चय है। घर जाके मोहन को देखूंगा। मेरे भेजे रुपयों से उन लोगों ने कैसे दिन बिताये, जानने की बड़ी उत्कण्ठा है। जीवन-दात्री धात्री दया-मयी दया को देखूंगा। सरस्वती के चन्द्रमुख को निहारूंगा। अब जी में कैसा अनिर्वचनीय अपार आनन्द अनुभव हो रहा है। हे जगदीस्वर मेरे इस स्वाभाविक आनन्द में मुझे निरानन्दन नहीं करना। दया-मय इस

दुर्भागे की मम्पत्ति सरस्वती, मोहन, दया को निर्विघ्न निरापद मिलाना। इतना रस्ता भारी हो गया। परन्तु घर जाके क्या देखूंगा ? भगवानही जाने ! जैसे छोड़ आया था, वैसेही देख पाऊं तो ही कुशल है। वही कैसे संभव है ? सब पदार्थ परिवर्तन शील हैं, भगवान ने गीता में अर्जुन के प्रति कहा है कि, चक्रवत् परिवर्त्तन्ते सुखानि दुखानि च।" मैंही उसका प्रमाण हूं। पहले दीन दरिद्र दुखिया था। पेट पालने के लिये विदेश निकला था, स्त्री पुत्र गृहस्ती के कारण देशत्यागी हुआ था। अब मैं ने अर्थ संचय किया। अब वैसी अवस्था नहीं है। अब अवस्था पलट गयी है। भाग्य-चक्र परिवर्त्तित हो गया। अर्थही न था अब अर्थवान हूं। खाली हाथ केवल मेंडू तक का रेल किराया दया से उधार लेकर घर से निकला था। मथुरा में जाके चौबे जी के अन्न से प्राण धारण किये थे। उसके बाद रासधारी की जमात में घसा, यद्यपि वह वृत्ति उत्तम न थी, तथापि उसी के द्वारा मेरे भाग्य-चक्र ने पलटा खाया। जिसकी जो इच्छा, कहे सुने पर रासही मेरे लिये साक्षात लक्ष्मी हुई।

बटुकनाथ—दादा जी ! क्या सोचते हो ?

काली प्रसाद—बटुकनाथ ! मैं बहुत कुछ सोच रहा हूं। मैं कितना कुछ विचार रहा हूं। एक बार आनन्द की मनोमोहन मूर्त्ति देखता हूं, पुनः दुःख की भीषण मूर्त्ति दृष्टि गोचर होती है। बटुकनाथ, तुमही सुखी हो, तुमसा सुखी कोई बिरलाही होगा। बटुक भाई, तुमने यहां ठहरने को कहा था, परन्तु मेरे जी में क्या हो रहा है, मैंही जानता हूं। बटुक भाई, तुम जिन लोगों को घर पर छोड़ आये हो; यदि उन में से किसी को न देख पाओ तो तुम क्या करो ? मैं अपनी स्त्री को और एक लड़के को घर पर छोड़ आया था। उनको जिस अवस्था में त्याग आया था। वह मैंही जानता हूं। बटुकनाथ, मेरे प्राण पंछी क्या इस देह पिंजर में हैं ? वह तो उड़के कबके घर पहुंच गये हैं। मेरे पर होते तो उड़के जा पहुंचता। कब स्त्री पुत्र को देखूंगा ? जब मैं घर से चला था, तो १५ दिन का भी खाने का ठिकाना नहीं था। मेरे सामनेही लंघन फाके की पारी आ गयी थी। कहो तो बटुक भाई, ऐसी दशा में छिन भर भी देर करना उचित है ?

बटुकनाथ—दादा जी ! अब मेरा जी भी बड़ा उतावला हो गया है । कब काशी पहुंच कर गंगा का गोता लगाऊं और बाबा विश्वेश्वर की झांकी कर घर को दौड़ मारूं ? पहले तो जी ढीला था । पर अब तुमारी बात से उड़के पहुंचने को जी चाहता है । दादाजी ! जब कि तुमने अपने पुत्र सहधर्मिणी तक का नाम मेरे आगे खोल दिया है, तो मैं भी काशी गंगा तट के समीप अपने चित्त के विकार को प्रकाश करता हूं । एक दिन मेरे बड़े भाई ने पांच रुपये घर में लाकर रक्खे, मैं ने वह पांचो रुपये चुरा लिये और एक सरंगी मोल लेली । बड़े भैयाने यह सब करम देख के गाली गलौज दी । मैं भी मनोवेदनासे तभी से देश त्यागी हुआ । इस के बाद ही मथुरा वृन्दावन की यात्रा की और हाथरस के पास तुमरे दर्शनालाप हुए । अब दादाजी, घर पहुंच कर बड़े भाई और मा के पैर में लिपट कर प्रणाम करने से चित्त हलका होगा । यह आशीर्वाद दो कि मेरी इच्छा पूर्ण हो ।

काली प्रसाद—(स्वगत) अहो ! भागवान ! ये लोग भी तो सहोदर भाई हैं । इन का आपस में कैसा

भाव है और हमारा परस्पर कैसा भाव अब हो गया है। इच्छामय जगदीश्वर ! सब तुमारीही इच्छा है (प्रकाश्य) तो बटुकनाथ, पैर बढ़ा के चलो। यहां क्यों वृथा देर होती है ?

बटुकनाथ—दादा जी, तुमने मानो मेरे प्राण को खोला दिया। मेरी इच्छा दौड़ने को होती है।

काली प्रसाद—जगदीश ! घर पहुंच कर स्त्री पुत्र और दया को प्रसन्न बदन देख पाऊं।

पंचम अङ्क।

द्वितीय गर्भांक।

लक्ष्मी के दालान का सामना।

(लक्ष्मी, गोमती, दुर्गा प्रसाद)

लक्ष्मी—मा उधर कोई है क्या ?

गोमती—(नेपथ्य में) नहीं।

लक्ष्मी—तो एक बात सुनो।

(गोमती का प्रवेश)

गोमती—क्या, क्या....क्या....

लक्ष्मी—एक दम बदन पर आचढ़ी, सूझता नहीं ?

गोमती—नहीं बेटी, नहीं बेटी, मुझे देख नहीं पड़ता ।

लक्ष्मी—तेरी आंखें फूट गयी हैं ? अभी से अंधी हो गयी ? कान बहरे न हुए हों तो सुन, न सुनायी दे तो बोल मैं चुप रहूं ।

गोमती—कहो बेटी, कहो मैं सुनती हूं ।

लक्ष्मी—कुछ सुना भी है कि क्या हुआ है ?

गोमती—नहीं तो ।

लक्ष्मी—तू क्या दिन भर कान में तेल डाल के सोती है ?

गोमती—नहीं बेटी, तुम लोग न कहो तो मैं कहां से सुनूं । तुमने तो मुझ से कोई बात कही नहीं ।

लक्ष्मी—बहुत बकवाद मत करो, सुनो उस दिन नये दिवान साहब ने हुक्म दिया है कि, ये लोग हिसाब किताब बही खाता साफ करके न समझा सकें तो काम छीन लिया जायगा ।

गोमती—अरे सत्यानाश !

लक्ष्मी—तूने ऐसा चिल्लाना हो तो यहां से उठ जा ।

गोमती—नहीं बेटी, अब नहीं चिल्लाउंगी, तुम कहो तो ।

लक्ष्मी—हिसाव किताब समझाने का तो कोई दांव हैही नहीं। इन पर जो हिसाब जांचने वाले हाकिम थे, वह मतवाले थे। सदा अमल में चूर रहते थे। जिसने जो पाया, हजम कर लिया। हमारे इनोने कुछ चोरी नहीं की है, पर औरों ने जो कुछ लिया है, उस में से इनको भी हिस्सा मिला है। अब या तो जेल जाना होगा या काला पानी होगा।

गोमती—कहां बेटी, मेरा लवड़ू जहां गया है? वह तो अच्छी बात है, वह तो अच्छी बात है। बच्चा मेरा वहां अकेला है दुर्गा के जाने से दुकेला होगा। जी में ढाडस बंधेगी।

लक्ष्मी—तेरी क्या अक्कल मारी गयी है? तू क्या बकती है? कुछ समझ बूझ के नहीं कहती?

गोमती—मैं क्या आपे में हूं? मैं पागल हो गयी हूं। शोक ताप से सुध बुध बिसर गयी है। अब क्या उपाव है?

लक्ष्मी—एक उपाव है वह भी नहीं सरीखा। अब जो चार हजार रुपये और और अमलों को घूस दी जाय तो बच सकते हैं। ये कहते हैं कि रच्छा होगी,

पर मेरे जी में भरोसा नहीं होता । क्यों बात नहीं करती ?

गोमती -कितना रुपया कहा ?

लक्ष्मी—चार हजार—

गोमती—कितने कोड़ी हुए ?

लक्ष्मी—मर अंधी तू, क्या दूध पीती छोकरी है ? चार हजार देने में कुछ नहीं रहेगा मेरा कंपनी का कागज और सब गहने चले जायंगे । अब उपाव क्या ? मेरी समझ में ये रुपये देने मे भी बचाव नहीं है । लाभ मध्ये रुपये भी जायंगे । प्राण भी नहीं बचेंगे । मैं कहती हूं, कंपनी का कागज नगद और गहने आदि जो कुछ है, एक दिन तुमरे घर ले चलूं । यहां रहने मे आंख की लाज से देना पड़ेगा । दूर रहने से लाज का दबाव नहीं पड़ेगा । आज जो रुपये दे दूं और कल वे कालेपानी भेजे जायं; तो मैं भीख मांगती फिरूंगी। यह नहीं होगा, मा तुम क्या कहती हो ?

गोमती—इस में भी क्या पूछना है बेटी, "अपनी पूंजी खोय के दर दर मांगे भीख" । ऐसी भूल मेरे बंश में कोई न करे ।

लक्ष्मी—मैं भी वही कहती हूं कि, रुपये रख के चाहे जहां जायं, जी में तो यह विचारेंगे कि मैं जोरू लड़के को डुबा नहीं आया, जी की ढाड़स और सन्तोष तो रहेगा।

गोमती—अपना मत खोना, अपना मत खोना, जो अच्छा समझा करो।

(गोमती का प्रस्थान)

(दुर्गा का प्रवेश)

लक्ष्मी—कहां गये थे ?

दुर्गा प्रसाद—पुराने हाकिम साहब के; उनको ये रुपये देने से वह सब झोंकी अपने सिर ले लेंगे, वह कहते हैं, मेरी तो नौकरी गयी है, झोंकी में फसा हूं, तुम इतने दे दो तो मैं तुमरी बला भी अपने सिर पर डाल लूंगा। जो होना होगा वह होगा, बचता तो दिखता नहीं। तुमरी नौकरी और बात बनी रह जायगी। अब रुपये देने चाहियें, इसका क्या होगा ?

लक्ष्मी—जब देने होंगे, तब दिये जायंगे।

दुर्गा प्रसाद—तो दो, वह सब कागज दे दो और एक हजार रुपये अंदाज का गहना।

लक्ष्मी—अभी न देने से नहीं।

दुर्गा प्रसाद—नहीं।

लक्ष्मी—देने से कुछ लाभ होगा क्या ?

दुर्गा प्रसाद—लाभ की क्या कहती है ? मैं बच जाऊंगा, नौकरी भी बनी रहेगी; नहीं तो जाल जुआ चोरी के मामले में काले पानी जाना होगा।

लक्ष्मी—रुपये देने से क्योंकर बच जाओगे ? मेरी तो समझ में नहीं आता। मेरी समझ में आता है कि रुपये भी जायंगे, तुम भी जाओगे।

दुर्गा प्रसाद—मैंही यदि गया, तो तुमरे पास रुपये रहके क्या होंगे ?

लक्ष्मी—रुपये न रहने से तुमरे गये पीछे घर घर भीख मांग के पेट भरना पड़ेगा, यह क्या तुमारे लिये अच्छा होगा ?

दुर्गा प्रसाद—तुम लोग भीख क्यों मांगोगी लक्ष्मी ? मेरी जमीन जायदाद है, मकान हैं; उससे तुम लोगों का अच्छी तरह निर्वाह होगा और इन रुपयों के देने से मैं बच जाऊंगा। नौकरी बनी रहेगी लक्ष्मी। तुरंत दो, बाहर सिपाही बैठे हैं। देर होने से देना

न देना एकसा होगा । क्यों तुम चुप क्योंकर रहीं, बात क्यों नहीं करती; अब दोगी या नहीं ?

लक्ष्मी—इतना जोर जबरदस्ती करो तो न दूंगी ।

दुर्गा प्रसाद—मेरा अपराध हुआ, अब छिमा करो, अब देओ ।

लक्ष्मी—तुम लोगों जैसे कठिन लोग, मैं ने नहीं देखे; कुछ दिन तुमरे भाई ने जला खाया । अब वह गये, तुम पीछे पड़े । मेरे भाग में सुख नहीं बदा । बाबूजी क्यों मुझे ऐसे घर में ब्याह दिया था ? (क्रन्दन)

दुर्गा प्रसाद—मुझे तूने ही डुबाया, तू रुपया दे देती तो मुझे विपद न झेलनी पड़ती ।

(नैपथ्य से) दुर्गा बाबू आइये देर हुई ।

दुर्गा प्रसाद—आता हूं (लक्ष्मी के पैर पकड़ कर) लक्ष्मी ! मुझे बचा, तू न रक्षा करेगी तो मैं नहीं बचूंगा, मैं तेरे पैरों पड़ता हूं, रक्षा कर ।

लक्ष्मी—मेरे बाप सुपने में भी नहीं जानते थे कि मुझे ऐसा दुख होगा । मेरा जनम भर दुखही दुख में बीता । ऐसे ठिकाने मेरा व्याहं किया था ।

गोमती—मैंने तभी तेरे बाप से कहा था कि इस काम में सुख न होगा, तुमरे बाप ने मेरी बात न मान के तुमरा व्याह यहां कर दिया । मुझे गाली न देना बेटी, मुझे बुरा मत कहना! अरे बच्चा लवड़धू राम; तू कहां है बेटा, अरे लवड़ू ।

(नेपथ्य से) दुर्गा बाबू जल्दी आइये ।

दुर्गा प्रसाद—नहीं दिया, लक्ष्मी इतने दिनों में तेरी अच्छी सलाह वा सत्परामर्श का अर्थ मैं ने समझा। तूने मेरे को बेवकूफ बेअक्कल कहा था । मैं सचमुच बेवकूफ कमअकल हूं । नहीं तो तुझसी पापिन के बहकाने से, प्यारे सहोदर भाई को घर से क्यों निकाल देता ? मेरे घर की साक्षात लक्ष्मी स्वरूपा सरस्वती कोही क्यों इतना कष्ट देता ? भतीजे मोहन की क्यों इतनी दुर्दशा देखता ? छोटी बहू के हमारे घर में आये पीछे, मेरे सब दुख दूर भाग गये, मेरी गृहस्थी राजा की गृहस्थी सी हो गयी थी । तेरीही परामर्श से पुत्र सम छोटे भाई को जुदा कर दिया, तेरेही कहने से स्वर्ण-प्रतिमा छोटी बहू को अलग कर दिया । जब वह अन्न बिना फाका करती रही, तो तेरीही

परामर्श से मैं ने उसे अन्न नहीं दिया। जब कन्या स्थानीया छोटी बहू मोहन को गोदी में बैठा कर रोती थी और उसके आंसू धरती पर पड़ते थे, तभी मैं समझ गया था कि, इस अबला सरला छोटी भौजाई के आंसू बृथा न जायंगे। अवश्य प्रतिफल मिलेगा। किसी महात्मा ने ठीक कहा है कि, "दुर्बल को न सताइये जाकी मोटी हाय। मुए खाल की सांस से सार भसम हो जाय"। अब हमारा मंगल नहीं है। छोटी बहू मारे चिन्ता के पीड़िता हो गयी है। तू ने मेरे देव-प्रकृति सरल हृदय छल कपट हीन भाई को रस्ते का भिखमंगा बना दिया है। अन्त को मैं बचा था, मुझे भी तूने खाया। तेराही दोष क्या है? मेरा जैसा कर्म है, वैसा फल पाया। मैं कैसा पिशाच हूं, मुझसा और पातकी कौन है? मैंने लोगों के चित्त में क्लेश देके, प्रजापीड़न करके, चोरी जुआचोरी जालसाजी करके, धन संचय किया है। दूसरे के मुख का ग्रास छीन कर निज उदर पूर्ण किया है। मैंने अर्थ के लिये पाप पुण्य धर्म्म अधर्म्म का ज्ञान नहीं किया। जिस उपाय से बना, अर्थ संचय किया, उस अर्थ का उस पापार्जित अर्थ का, मैंने कैसा सदव्यवहार किया है! उसी अर्थ

को मैं ने इस पिशाचिन के पैरों पर डाला है। उसी अर्थ से मैंने इस पापिन पिशाचिन की पूजा की है। मनुष्य जो नहीं कर सकता, वह मैं ने किया है। मोहन जब भूख के मारे रोआ करता था। तब मैं अपने कानों से सुनके भी अनसुनी कर देता था। उस ओर से हट जाता था, कि कहीं आंखों की लाज से एक पैसा हाथ में न धरना पड़े। मैंने पुत्र के पिता होकर ऐसा घृणित बर्त्ताव क्यों किया? इसी राक्षसी की मन तुष्टि के लिये। मैं नर पिशाच हूं! नहीं तो अर्थ के लिये क्यों ऐसा अनर्थ करता? क्यों पुत्री तुल्या भ्रातृ-वधु को सीमातिरिक्त कष्ट देता? क्यों पुत्र तुल्य सरल प्रकृति कनिष्ट सहोदर को देश त्यागी कराता? क्यों पुत्रापेक्षा प्रिय भ्रातस्पुत्र को इतनी यंत्रणा देता? लक्ष्मी, अब मैं तेरा मुंह नहीं देखूंगा। मुझे यथेष्ट शिक्षा मिल गयी। काली, काली! कहां मेरे भाई? देख जाओ! तुम्हें कष्ट देकर अन्त को मेरी कैसी दुर्दशा हो रही है? पाप का प्रायश्चित हो रहा है!

(नेपथ्य से) दुर्गा बाबू! हम लोग तुम्हरे अन्दर आके पकड़ लावें क्या? देना हो दीजिये, नहीं तो

बाहर आके बात कीजिये, भीतर घुस बैठने से काम नहीं चलेगा। जल्दी बाहर आइये।

दुर्गा प्रसाद—मेरी सब आशा पूर्ण हो गयी। मेरे पास देने को भी कुछ नहीं, कुछ कहना भी नहीं है। इस समय काली को नहीं देख पाया। काली! काली! जाता हूं, जाता हूं; जन्म भर के लिये विदा होता हूं। मुझे पकड़ो बांधो, मुझे काले पानी भेजो (प्रस्थान)।

लक्ष्मी—अजी तुम तो चले, इस रांड़ की क्या गति कर चले?

गोमती—चुप करो बेटी, चुप करो। देखोना मेरा लवडू गया। मैं हिये पर पत्थर धरके बैठी हूं।

लक्ष्मी—देखो मा! जो होना था वह हुआ। अब एक काम करो, गहना, गांठी, रुपया, पैसा, कंपनी का कागज एक पिटारे में भर के रातोरात तुमरे घर रख आऊं। सोहन सोहिनी भीतर सोये हैं। उनको पड़े रहने दें। क्या जाने घर में खाना तलासी कहीं आजाय। आजही रात को सब काम ठीक करना होगा।

गोमती—ऐसाही करो बेटी, ऐसाहीं करो। पीछे क्या दोनों ओर खोवेगी? न इधर को रहोगी न उधर की।

लक्ष्मी—ये तो गये ! मुझे प्यार से लक्ष्मी कहके कौन पुकारेगा ? अरे बावा अब कौन रुजगार करके रुपये लावेगा ? अरे अन्त में क्या मुझ रंडिया को घर की पूंजी तोड़ कर पेट भरना होगा ?

गोमती—अरे बच्चा दुर्गा ! अरे बेटा लवड़धूं राम, बेटा मेरे !

(दोनों का प्रस्थान)

पंचम अङ्क ।

तृतीय गर्भाङ्क ।

घर का चौक ।

(सरस्वती, दया, कालो, मोहन, गुरुदेव, लक्ष्मी)

सरस्वती—दया, क्या उनके दर्शन न होंगे ? दरोगा ने तो कहा था कि जल्दी आवेंगे । आज तक नहीं आये ।

दया—छोटी ठकुराइन ! धीरज धरो, भगवान भला करेंगे ।

सरस्वती—कब आवेंगे ? चार बरस बीते, आने की बात सुनो; पर अब तक नहीं आये । अब मेरा जी कैसा कैसा करता है ।

दया—छोटी बहू, तुम को कुछ पीड़ा नहीं है। चिन्ता से शरीर दुबला हो गया है। सोचते सोचते सिर दुखने लगा है। तुमरे पेट की पीड़ा अब कैसी है?

सरस्वती—कुछ कम है।

दया—अच्छा थोड़ा सो रहो।

सरस्वती—मारे सोच के नींद नहीं आती। मेरा जी भाई जी और उनही में लगा है, दर्शन बिन जी तरस रहा है।

(गीत)

दर्शन बिन अंखियां तरस रहीं।

तरस रहीं तरसाय रहीं दर्शन बिन०

काली प्रसाद—(नेपथ्य से) घर में कौन है? दया है, दया है?

सरस्वती—दया देख उनही कासा गला है। जा जा चट पट जा, देख आये क्या?

दया—वही तो छोटे बाबू आये हैं! आती हूं!

(दया का प्रस्थान)

सरस्वती—दयामय भगवान! इतने दिनों में क्या तुम सदय हुए! हे भगवान तुम सत्य हो तो निश्चय वे आये हैं। करुणा निधान! दुर्भागी के प्रति सदय हो।

(दया और काली का प्रवेश)

काली प्रसाद—रानी ! यह तेरी क्या दशा है ? मैं बड़े आनन्द से तेरे को देखने को दौड़ता आया, हे जगदीश ! यह क्या हुआ ?

सरस्वती—तुम आये ! इतने दिनों बाद इस दासी की सुध आयी ?

काली प्रसाद—दया, यह क्या हुआ ? संकटा घाट में नाव पर से उतरतेही मुक्खू घाटिये ने लबड़ू की करनी करतूत सुनायी; चिट्ठी और रुपयों का ब्योरा भी सुन लिया है। बतलाओ इतने दिन कैसे काम चला ?

दया—जिसने मुंह खोला है, वह अन्न देताही है। श्री संकटा माई का प्रसाद मिलता है। महाराज जम्बू के अन्न सत्रके कर्म्मचारी ने रोज एक सीधे का बन्दोबस्त करा दिया है। पंडित गौरी शंकर जी और राय पन्ना लाल जी ने मोहन के पढ़ने का प्रबन्ध "कर्मसंचारिणी पाठशाला" में कर दिया है। इसी तरह दिन कटते हैं। भगवान हम लोगों से दीन दुखियों पर दया करने वालों का भला करें। वकील छन्नूलाल खत्री ने बिना पैसा लिये अदालत में हम लोगों का सच्चा पच्छ लिया और अदालत को यह बात

जतलादी कि यह घर दुर्गा बाबू का नहीं है, पुरखाओं का है। इस में सब का साझा है। बड़ों के पुण्य से बच गया। नहीं, तो यह भी जपत होकर लिलाम पर चढ़ जाता। खड़े होने का ठिकाना नहीं रहता।

काली प्रसाद—इसे क्या पीड़ा है कि, ऐसी दुब्ली हो गयी ?

दया—पीड़ा क्या है ? कुछ तो मांदगी और कुछ मारे चिन्ता के ऐसी हो गयी हैं, अब अच्छी हैं, परोपकारी वैद्य महाराज अर्जुन जी मिश्र ने बिना दाम चंगा कर दिया है।

काली प्रसाद—बड़े भैया का क्या सुना है ? वह क्या सच है ?

सरस्वती—हां सब सच है, भाई जी पर फौजदारी और दिवानी मुकदमा चल रहा है। पहले तो चार हजार देने से बच जाते पर अब····

काली प्रसाद—पर अब क्या करने से बच सकते हैं ?

दया—पहले देने से नौकरी भी नहीं जाती, मुकदमे में भी नहीं फसते; पर अब पांच हजार देने से बच जा सकते हैं। नौकरी नहीं मिलेगी।

काली प्रसाद—चूल्हे में गयी नौकरी, जान बचे तो ही सब कुछ भर पाया ।

सरस्वती—तो तुमगे किये कुछ बन पड़े तो जल्दी करो, मेरो को कुछ पीड़ा नहीं है । जब से भाई जी हवालात में फसे हैं, तभी से मारे चिन्ता के यह सब पीड़ा बढ़ गयी है ।

काली प्रसाद—क्या बड़ी भाबोजी ने कुछ न निकाला ?

दया—हुं, वह निकालने लगी थीं, उनही के किये सब धन्धा गन्दा हुआ । वह देतीं तो यह राढ़ क्यों बढ़ती ?

काली प्रसाद—मैं जाऊं, कुछ उद्योग करूं ।

दया—कहां जाओगे....वहां अब क्या धरा है ? सब कुछ लेकर नेहर भागी थीं, वरना पार होने नाव डूबी, कुछ उस में गया, बचा बचाया वहां से पुलिस और अदालत वालों ने कौड़ी २ लेली, वह भी नेहर से लौट कर कई दिनों से यहांही आ पड़ी हैं ।

मोहन—बाबूजी आये ! बाबूजी आये ! तुम चले गये, तायाजी भी चले गये । मेरा जी बड़ा घबराता था ।

कालीप्रसाद—अच्छा बेटा, मैं आगया, तायाजी भी आ जायेंगे। तुम मत घबराओ। तुमरे लिये बहुत से खिलौने और रुपये लाया हूं।

(गुरुदेव का प्रवेश)

गुरुदेव—हर! हर! हर! यह क्या हुआ? ग्रह-वैगुण्य से स्वर्णमय सम्पत संपन्न परिवार मृतिका का हो गया। मैं पांच वर्ष के निमित्त तीर्थ पर्य्यटन को न चला जाता तो कदाचित् ग्रहों की शान्ति हो जाती, यह विलक्षण उपद्रव उपस्थित न होता। चोर राज-कर्मचारियों की संगत से दुर्गा को दुर्मति ने घेर लिया, दुर्बुद्धि साले की कार्य्य प्रणाली ने मोहान्ध बना दिया। लवडू को भी पाप का पूरा प्रायश्चित्त करना पड़ा, सच कहा है कि........

"करि कुसङ्ग चाहत कुसल, तुलसी मन अपसोस।
महिमा घटी समुद्र की, रावन बसे परोस॥ १॥"

"करे बुराई सुख चहे, कैसे पावे कोइ।
बोये पेड़ बबूर के, आम कहां से होइ॥ २॥"

राम लक्ष्मण सदृश सहोदर द्वय में यह बिवाद क्यों होने लगा था? गुसांई जी ने क्या मिथ्या कहा है कि,

जहां सुमति तहं संपति नाना ।
जहां कुमति तहं विपद निदाना ॥

अस्तु···सुनो वच्चा काली । तुम चिन्तित मत हो । काल चक्र से लोक शिक्षा के लिये यह काण्ड संघटित हुआ है । दिवान जी मेरे स्थान पर आये थे । उन से जान पड़ा कि, तुमरे भाई ने चौदह सहस्र की रोकड़ तोड़ी थी, उस में से नौ सहस्र तो प्राप्त हुआ। यह गृह भी छीना जाता, परन्तु पैतृक और तुमारा अंश इस में रहने के कारण इस पर किसी का हस्ताक्षेप नहीं हुआ। अब पांच सहस्र प्रदान करने से सब मिट जा सकता है । दिवानजी ने मुझ से धर्म्म-प्रतिज्ञा की है । वह दिवानी फौजदारी से बचा देंगे, और तुमरे भाई को तो नहीं; पर उनके स्थान में तुम को सहकारी कोपाध्यक्ष का पद प्रदान करने में सम्मत हुए हैं ।

काली प्रसाद—सुनिये महाराज ! गुरुदेव ! जिस जम्बू के महाराज के अन्नसत्र से दया सहित स्त्री पुत्र का पालन हुआ है । वेही परमोदार महाराज कुम्भ पर हरिद्वार पधारे थे, हमारी रास मंडली भी गयी थी । उन्होंने मेरे पखावज बजाने से प्रसन्न होकर एक हीरे

का कण्ठा दिया था, मैंने कभी जचाया नहीं है। परन्तु वह आठ दस हजार का अवश्य होगा। उसे बेचकर मैं पितृ तुल्य ज्येष्ठ सहोदर की अवश्य सेवा करूंगा। शत धिक्कार है मेरे को! कि, मेरे पास धन रहे और भाई मेरे जेल यन्त्रणा भोग करें!

दया—यें! छोटे बाबू उनोने इतना कष्ट....

काली प्रसाद—सुन दया यह तेरे योग्य बात नहीं, यह सब कुछ मेरे भाग्य चक्र से हुआ है। मैं क्या पूज्य भाई को कष्ट देकर पलटा लूंगा। तू क्या नहीं जानती कि "मिलहिं न जगत सहोदर भाई, दया दया! तू अति बौराई"।

दया—छोटे बाबू! मैं स्त्री हूं, मेरी बात का आप क्या ध्यान करते हैं?

गुरुदेव—धन्य काली! तू धन्य है! अभी चलो, दिवान जी से शीघ्र मिलके प्रबन्ध करना होगा। बेटा सरस्वती, बच्चा मोहन! तुमरे दुख के दिन दूर गये। पुन: मंगलमय ईश्वर सब मंगल करेंगे।

काली प्रसाद—यह चीज वस्त संभालो। रानी, मेरे संदूक की यह कुंजी लो (कुंजी देकर) उस में से

हीरे का कण्ठा निकाल दो। वेच के काम का प्रवन्ध करूं और कपड़े लत्ते रुपये पैसे निकाल के ठिकाने रक्खो। मेरी पूज्या मातृ तुल्या वड़ी भावोजी कहां है?

दया—उस अन्दर हैं।

(लक्ष्मी का प्रवेश)

लक्ष्मी—काली वाबू मैं तुझे मुंह दिखाने लायक नहीं, मेरी करनी से यह सब हुआ, तुम मुझे छिमा——

काली प्रसाद—(प्रणाम कर) राम, राम, माता! यह क्या कहती हो?

गुरुदेव—ईश्वर सब मंगल मानस से ही करते हैं। यदि काली विदेश न जाता तो, आज तुम्हारे स्वामी के वचने का कौनसा उपाय था?

(सभों का प्रस्थान)

पंचम अङ्क।

चतुर्थ गर्भांक।

महाराज की सभा।

(महाराज, दिवानजी, गुरुदेव, काली, दुर्गा, लवड्डू, अन्यान्य कर्मचारी, भाट, और गायक)

दिवानजी—देखो दुर्गा प्रसाद ! आज तुम उसी भाई की बदौलत बचे जाते हो कि, जिसको और जिसके जोरू लड़के को तुमने अजहद्द सताया और तकलीफ दी, इसके नीयत की जितनी तारीफ की जाय थोड़ी है।

गुरुदेव—कृपा निधान ! दिवानजी ! आप सर्वज्ञ हैं। जिसने जैसा किया, वैसा पाया। अब आप अपनी उचित आज्ञा से कृतार्थ करें।

दीवानजी—बस अब यही कहना है कि, दुर्गा बाबू के सब कुसूर सर्कार ने माफ फर्माये, और उनके उहदे पर, उनके छोटे भाई काली बाबू को बहाल किया। दुर्गा बाबू से पावनी रकम जो कि काली बाबू ने अता की है। इस बात से सर्कार और आम लोग निहायत खुश हैं और भगवान का शुक्रिया अता करते हैं।

गुरुदेव—"राजास्वस्ति प्रजास्वस्ति देशस्वतिस्तथैं वच:"। न्याय प्रिय महाराज, दिवानजी और सभों का मंगलमय ईश्वर मंगल करें।

(लवडू का प्रवेश)

लवड़घूं—अड़े मैं भी आ डया, महाड़ानी टी जुबली

हुई, मुझे जेल टे साहव ने छोड़ डिया। टह डया जीजी मे मिला, मव टोई आनंड मंडल टड़ डहे हैं। मंटटा डेवी टी पूजा होडी। आज डटजडा होडा। ठूव पडमाड पेट भड़ टे टाऊंडा। अड़े मीठे चावल, खीड़ खीड़, मालपुआ।

दिवानजी—अरे यह पागल कौन आ घुसा ?

गुरुदेव—यह दुर्गा वावू का वही दुलरुआ साला है।

दुर्गा प्रसाद—गुरु जी ! क्यों लज्जित करते हैं ?

दिवानजी—अच्छा काली वावू को नायव-खजांची के ओहदे की खिलत दी जाय, सुनो काली वावू ! तुमरे भाई ने जो कुछ काररवाई की उसका नतीजा हाथो हाथ सामने आया। खूब होशियारी और दियानतदारी से काम करना और सिरोपाव की शरम रखना (सिरोपाव प्रदान)

काली प्रसाद (कृतज्ञता से झुक कर) जो आज्ञा।

गुरुदेव—आज बड़े आनन्द का दिन है, सब विगड़ी वात बन गयी। धन्य महाराज ! धन्य सुमन्त्री ! और धन्य काली सहोदर !

लवड़घूंराम—ओड़ मैं।

गुरुदेवजी—तू भी धन्य ! कि महारानी के जुबली-यज्ञ में भारत माता की कृपा से जीवित लौट आया।

दिवानजी—जो कुछ हुआ, वह अच्छाही हुआ, जुबली के सबब से लवड़ू तक बच आया, अब एक जुबली का जलसा कर दर्बार बर्खास्त करो।

(कविता पाठ करते हुए भाट का प्रवेश)

"दूसरो दीसत और न तो सम चारिहु ओर सबै गुन खानी। बुद्धि में वैभव में बल में बस तेरे समान तुही ठहरानी॥ तोहि प्रताप नरायन दे, कर दीन्हे सबै महिपाल अमानी।क्यों गुन गावैं न राजा प्रजा सब तेरे अहे विकटोरिया रानी॥ १॥

न्याय में हंसिनि ज्यों बिलगावहु दूध को दूध औ पानी को पानी। पालंहु मात समान प्रजाहि सदाहि सबै गनि पूत अजानी॥ भारत में सुख शोभ बढ़ावहु गंग लौं ह्वै गुन गौरव खानी। देवि सची जिमि नंदन बैठी अनंद करो विकटोरिया रानी॥ २॥

मित्रन को सुख शोभ में राखत लच्छिमी लौं सुभ लच्छन खानी। शत्रु विनाशत वार न लावति कालिका सी बनि काल निशानी॥ विद्या बढ़ावति चारिहु ओर सरस्वती के समतूल सयानी। एकहि रूप में राजै त्रिदेवि ह्वै जैति जै श्री विकटोरिया रानी॥ ३॥"

(गाते हुए गायक का प्रवेश)

" प्रभु रच्छहु दयालु महरानी ।
बहु दिन जिये प्रजा सुखदानी ॥
हे प्रभु रच्छहु श्री महरानी ।
सब दिसि में तिनकी जय होई ॥
रहै प्रसन्न सकल भय खोई ।
राज करै बहु दिन लौं सोई ॥
हे प्रभु रच्छहु श्री महरानी । "

(सभा भंग)

पंचम अङ्क ।

पंचम गर्भांक ।

श्री संकटा देवी का मंदिर ।

(गुरुदेव, दुर्गा प्रसाद, काली प्रसाद, सोहन, सोहिनी, मोहन, लक्ष्मी, सरस्वती, पड़ोसी मित्रगण, पड़ोसिन स्त्रियें, दया, इत्यादि, २) ।

(सब मिल के भजन गाते हैं।)

(भजन)

"अष्ट भुजा त्रिपुर सुन्दरि दुर्गा महारानी। काली कल्यान करन जगत जोत कालिका, लक्ष्मी अन्नपूर्ना दुर्गा महारानी। भीमचंडी चंडिके, चंडिके प्रचण्डिके; लज्जा मेरी राखिये विन्ध्याचल महारानी।

संकटा, सिद्धेश्वरी वागेश्वरी रूप सदा, हिंगलाज ज्वालामुखी शारदा महारानी। सिद्ध माता सीतला, ललता देवी सरस्वती; तुलसी दास सरन आये आसर श्री रानी॥"

जवनिका पतन।

॥ इति ॥

PRINTED AT THE CHANDRAPRABHA PRESS CO., LI
BENARES CITY.